प्रस्तावना.

मित्रहो नाडी देखनेके अनेक ग्रंथ छपे है. जैसे नाडीज्ञानतरंगिणी. नाडीविज्ञान. नाडीप्रकाश. नाडीविवेक और बहुतसे ग्रंथ नाडीके लिखेहुएभी मौजूद है परंतु जैसा यह नाडीदर्पण छपा है ऐसा ग्रंथ इस विपयमें आजतक कहीं नहीं छपा. दूसरे बहुतसे ढपोलसंख वैद्य नाममात्रको नाडी देखते है परंतु वास्तवमें उनको नाडी ज्ञानही नहीं है। होय कहांसें ? वो सद्गुरुके पास पढे तो आवे सो पढनेसैं तो उनको सरम आती है; परंतु विनापढे घरवैठे पढजावे उनके वास्ते मेने यह नाडीदर्पण निर्माण करा है प्रथम इसमें आयुर्वेदोक्त नाडी देखनेकी विधी विस्तारपूर्वक लिखी है फिर यूनानी ग्रंथोंके आधारसें नब्ज परीक्षा लिखी फिर डाकटर लोग किसप्रकार देखते है उनका क्रम लिखा है और इनके यंत्रभी देखनेकी विधि सहित लिखे है केवल इस एक नाडीदर्पणके देखनेसैंही फिर अन्य नाडीके ग्रंथ देखनेकी बिलकुल इच्छा नहीं रहे प्रियवरों यह एकवार ३००० तीनहजार छपाथा सो हाथोंहाथ विकगया अब फिर पहलेसैं मोटा कागद और मोटे टाइपमें छापा है फिरभी कीमत नहीं बढाई गई यह ग्रंथ आपके हस्तगत है देखलीजिये सत्यासत्य निर्णय होजायगा

आपका पं० दत्तराम चौबे मथुरानिवासी

श्रीः।

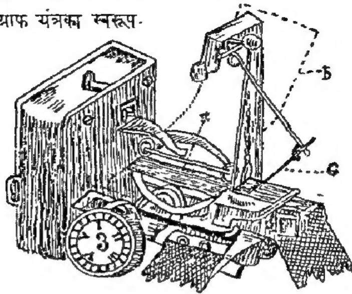
नाडीदर्पणस्य विषयानुक्रमणिका।

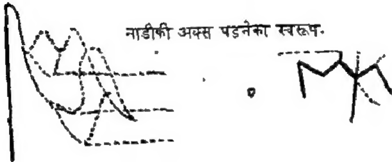
अथैंग्लंडीयमतेन नाडीपरीक्षा.

इंग्रजी संज्ञा.

इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ॥

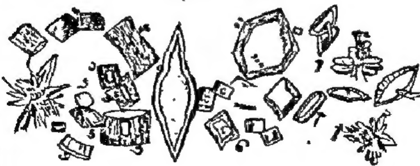
स्फिग्मोग्राफ यंत्रका स्वरूप·



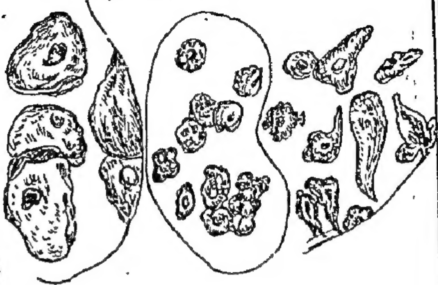


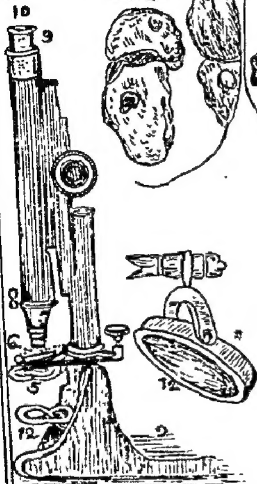
नाडीकी असर पड़नेका स्वरूप·

मूत्रजन्य पदार्थ

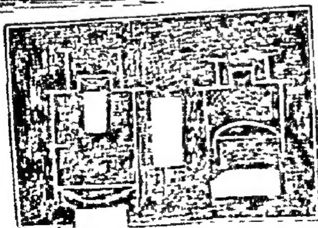


मूत्रजन्य द्वितीय प्रकारके पदार्थ.

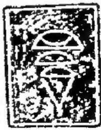




सूक्ष्मदर्शक



खुर्दबीन



धमनी प्रदर्शक चित्र.

इस धमनी प्रदर्शक चित्रमे ख ग धमनी मूल यह ऊर्ध्वाभिमुखी, पश्चाद्‌गामी तथा निम्नमुखी ये तीन अंशांमे विभक्त है

द क	कपालस्थ धमनी	च	उदरस्थ नाडी
झ न	गलस्थ धमनी	द	नलपार्श्वीय धमनी
ग	कंठस्थ धमनी	न	जानु पश्चात् धमनी
क	कक्षा नाडी	च	जानुस्थ सन्मुख नाडी
ज	धमनीरूपधा वक्षस्थ मूल नाडी	ख त	गर्भाभ्यन्तर धमनी
त ड	उदरस्थ मूल नाडी	ह क	प्रगण्डान्त नाडी
ट ड ज	अभ्यन्तर (भीतरकी) बस्तिनाडी	न क	मणिबन्धस्थ नाडी
ज ट	बाह्य (बाहरकी) बस्तिनाडी	ग घ	करांगीय धमनी

ॐ

श्रीशम्वन्दे

श्रीनिकुञ्जविहारिणेनमः

अथ नाडीदर्पणप्रारम्भः ।

मङ्गलाचरणम्

श्रीमन्तं जगदीश्वरं गदगदाधारञ्च धन्वन्तरि-
मम्बां श्रीजगदम्बिकाप्रतिकृतिं श्रीकृष्णलालाभिधम् ।
तातं कृष्णपरावतारमहिमं नत्वा मुहुः संयतः
श्रीकृष्णांघ्रिसरोरुहद्वयसुधाधारामिलिंदायितः ॥ १ ॥
श्रीमन्माथुरमण्डलाभिजननः श्रीदत्तरामाभिधो
दृष्ट्वा तन्त्रसमूहमूहविधयाऽऽलोड्य स्वयं यत्नतः ।
बालानां सुखहेतवे मतिमतामानन्दसंप्राप्तये
नाडीदर्पणनामधेयकमिमं ग्रन्थं करोम्यादरात् ॥ २ ॥ युग्मम् ।

अर्थ—श्रीमान् जगदीश्वर रोग और अरोग्यके आधार ऐसे श्रीधन्वन्तरि भगवान् तथा जगन्माता (लक्ष्मी) के तुल्य रमा नामक अपनी माताको तथा कृष्णका परावतार ऐसे श्रीकृष्णलाल (कन्हैयालाल) नामक अपने पिताको वारंवार यत्नपूर्वक नमस्कारकर श्रीकृष्णचरणकमलयुगलामृत धाराको पानकरता भ्रमर और श्रीमधुपुरीमंडल अथवा माथुरद्विज (चौबे) नको मंडल कहिये समूह तामें निवास जाको, अथवा जन्म जाको ऐसा जो दत्तराम संज्ञक में सो अनेक शास्त्रसमूहको देख और स्वयं विधिपूर्वकयत्नसें मथनकर बालकोंके सुखकेलिये पंडितोंके आनन्दकी प्राप्तिकेअर्थ नाडीदर्पण नामकग्रंथको परमआदरसें करताहूं । यह ग्रंथ यथानाम तथा

गुणोंमेंभी है अर्थात् जैसें दर्पणसें इसप्राणीके संपूर्ण गुणदोष प्रगटहोतेहैं उसीप्रकार इसग्रंथसें नाडियोंके संपूर्ण गुणदोष उत्तम रीतिसें प्रगटहोतेहैं ।

वाग्भटः

रोगमादौ परीक्षेत तदनन्तरमौषधम् ॥
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—वाग्भट ग्रंथमें लिखाहै वैद्यको उचितहै कि प्रथम रोगकी परीक्षा करे रोगजाननेके अनंतर औषधकी परीक्षा करे रोग और औषध दोनों जाननेके पश्चात् ज्ञानपूर्वक अर्थात् सावधानीकेसाथ चिकित्साकरे यानी औषध देवे ।

लक्षयित्वा देशकालौ ज्ञात्वा रोगबलाबलम् ॥
चिकित्सामारभेद्वैद्यो यशः कीर्त्तिमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

अर्थ—देश और कालका लक्ष करके और रोगको बली और निर्बलित्व जानके जो वैद्य चिकित्साका प्रारम्भ करताहै वह यश, और कीर्त्तीको पाताहै।

रुग्णावस्थां ततो नाडीं भेषजं पथ्यमेव च ॥
देशं कालञ्च पात्रञ्च यो जानाति स वैद्यराट् ॥ ५ ॥

अर्थ—रोगीकी अवस्था, नाडी, औषध, पथ्य, देश, काल, और पात्रको जानताहै उसको वैद्यराज कहतेहैं ।

रोगोंके आठस्थान

रोगाक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत् ॥
नाडीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शदृगाकृतिम् ॥ ६ ॥

अर्थ—वैद्य रोगी मनुष्यके आठ स्थानोंकी परीक्षाकरे, जैसे कि नाडीपरीक्षा, मूत्रपरीक्षा, मलपरीक्षा, जिव्हापरीक्षा, शब्दपरीक्षा, स्पर्शपरीक्षा, नेत्रपरीक्षा, और रोगीकी आकृतिकी परीक्षा ।

नानाशास्त्रविहीनानां वैद्यानामल्पमेधसाम् ॥
नाड्याद्यष्टपरीक्षाश्च सुखार्थं प्रभवन्ति हि ॥ ७ ॥

अर्थ—अनेक शास्त्र पढनेकरके रहित अल्प बुद्धि वैद्योंके लिये यह नाडी आदि अष्टविधपरीक्षा सुखके अर्थ होवेगी ।

आद्यं तावन्नाडिकाविज्ञानादेव वातपित्तकफजनितानामसाध्यासाध्यकष्टसाध्यसभेदकविज्ञानं सुकरत्वेन भिषग्भिरवाप्यतेऽत एव तावन्निरूप्यते ॥ ८ ॥

अर्थ–यहां प्रथम वैद्योंको नाडीके देखनेसें ही वात, पित्त, और कफजनित साध्यासाध्य और कष्टसाध्य सभेदविज्ञान सहजमें प्राप्त होसक्ताहै, प्रथम उसी नाडीपरीक्षाका वर्णन करतेहै। प्रथम नाडी देखनेकी दिखातेहै।

नाडीज्ञानकी आवश्यकता

नाडीज्ञानं विना वैद्यो न लोके पूज्यतां व्रजेत् ॥
अतश्चातिप्रयत्नेन शिक्षयेद्बुद्धिमान्नरः ॥ ९ ॥

विना वैद्य संसारमें पूज्य (माननीय) नहीं होता अतएव बुद्धिवान् मनुष्यको उचितहै कि नाडीज्ञानको सद्गुरुसें अति यत्नपूर्वक सीखै अर्थात् नाडी देखनेका अनुभव करे।

बोधहीनं यथाशास्त्रं भोजनं लवणं विना ॥
पतिहीना यथा नारी तथा नाडीं विना भिषक् ॥ १० ॥

अर्थ–जैसें बोधविना शास्त्रपढनेकी शोभा नहीं, विना लवण भोजनके पदार्थ प्रियनहीं, और पतिके विना स्त्रीकी शोभा नहीं, उसीप्रकार नाडी ज्ञानके विना वैद्यकी शोभा नहींहै।

नाडीजिह्वार्तवादीनां लक्षणं यो न विन्दति ॥
मारयत्याशु वै जन्तून्स वैद्यो न च शोभनः ॥ ११ ॥

अर्थ–जो नाडीपरीक्षा, जिव्हापरीक्षा, और स्त्रीके आर्त्तवकी परीक्षा नहीं जाने वह मूढवैद्य तत्काल रोगियोंको मारताहै, इसीकारण ऐसा मूढवैद्य उत्तम नहींहै।

आदौ सर्वेषु रोगेषु नाडीजिह्वाप्रनेत्रकम् ॥
मूत्रार्त्तवं परीक्षेत पश्चाद्दुष्णं चिकित्सयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ—वैद्य प्रथम संपूर्ण रोगोंमें नाडी, जिह्वा, नेत्र, मूत्र और आर्त्तवकी परीक्षाकर फिर रोगीकी चिकित्सा करे ।

नाडीज्ञानं विना यो वै चिकित्सां कुरुते भिषक् ॥
स नैव लभते लक्ष्मीं न च धर्मं न वै यशः ॥ १३ ॥

अर्थ—जो वैद्य विना नाडीपरीक्षाके जाने चिकित्सा करताहै वह धन, धर्म और यशको नहीं प्राप्तहोता परंच उसको अपयशकी प्राप्ति और मूर्ख कहलाताहै

नाड्या मूत्रस्य जिह्वायाः कुरु पूर्वं परीक्षणम् ॥
औषधं देहि तज्ज्ञाने वैद्य ! रुग्णसुखावहम् ॥ १४ ॥

अर्थ—हेवैद्य ! प्रथम नाडी, मूत्र, और जिव्हाका परीक्षण कर जब नाडी मूत्र और जिव्हाकी परीक्षाद्वारा रोगका निश्चय करलेवे तब रोगीको सुख-कारी ओषधी दे ।

यथा वीणागता तन्त्री सर्वान्रागान्प्रभाषते ॥
तथा हस्तगता नाडी सर्वान्रोगान्प्रकाशते ॥ १५ ॥

अर्थ—जैसें वीणाका तार संपूर्ण रागोंको सूचना करताहै उसी प्रकार हाथकी नाडी सर्वरोगोंको प्रकाशित करतीहै इस श्लोकका तात्पर्य यह है वीणाका तारभी जो बजाने वालेहैं उन्हीको उस तारके रागकी प्रतीत हो-तीहै उसी प्रकार हाथकी जो नाडीके जाननेवालेहै उन्हीको रोग प्रकाशित करतीहै जेसे मूर्खके वास्ते तारद्वारा राग नहीं मालूमहो उसी प्रकार मूर्खवै-द्यको नाडी देखना निष्प्रयोजनहै ।

नाडीलक्षणमज्ञात्वा निदानग्रन्थवाक्यतः ॥
चिकित्सामारभेद्यस्तु स मूढ इति कीर्त्यते ॥ १६ ॥

अर्थ—जो वैद्य नाडीके लक्षण विना जाने केवल निदानग्रंथके वाक्योंसें रोगपरीक्षा कर चिकित्सा करताहै वह मूढ (मूर्ख) ऐसा कहलाताहै ।

निदानपञ्चकादीनां लक्षणं वैद्यसत्तमः ॥
नाडींतु संवलीकृत्य चिकित्सामाचरेत्खलु ॥ १७ ॥

अर्थ–इसीकारण उत्तमवैद्य निदानपंचकादिके लक्षण जानके और उनमें नाडीके लक्षणभी मिश्रित (सामिल) करके चिकित्साका प्रारंभ करे।

कियत्स्वपि च चिह्नेषु ज्ञातेष्वपि चिकित्सितम् ॥
निष्फलं जायते तस्मादेतच्छृणवेकचेतसा ॥ १८ ॥

अ० कहतेहै कि बहुतसे चिन्ह जाननेपरभी चिकित्सा निष्फल, अतएव इस नाडीदर्पणग्रंथमें जो कहा जाताहै उसको हे वैद्य ! चित्तसैं सुन।

तत्रादौ प्रोच्यते नाडीपरीक्षातिप्रयत्नतः ॥
नानातन्त्रानुसारेण भिषगानन्ददायिनी ॥ १९ ॥

अर्थ–तहां प्रथम अनेक ग्रंथोंके अनुसार वैद्योंको आनंददायिनी यत्नपूर्वक नाडीपरीक्षा कहतेहैं।

क्वचिद्ग्रंथानुसंधानाद्देशकालविभागतः ॥
क्वचित्प्रकरणाच्चापि नाडीज्ञानं भवेदपि ॥ २० ॥

अर्थ–अब नाडीज्ञानकी परिपाटी कहतेहै कि कहीं तो नाडीज्ञान ग्रंथ होताहै, कहीं देश कालके जाननेसैं, और कहीं प्रकरण वससैं नाडीका होता है, तात्पर्य यहहै कि वैद्य केवल ग्रंथकेही भरोसैं न रहै, किंतु कुछ अबुद्धिसैं विचारे यह कौन स्थानहै, कौनसा कालहै, और ये रोगी क्या आहार विहार करके आयाहै, इसप्रकार अच्छी रीतिसैं विचारकर नाडीको कहे।

सद्गुरोरुपदेशाच्च देवतानां प्रसादतः ॥
नाडीपरिचयः सम्यक् प्रायः पुण्येन जायते ॥ २१ ॥

अर्थ–अब नाडीज्ञानकी उत्कृष्टता दिखातेहै कि सद्गुरु अर्थात् सद्वैद्यके बतानेसैं और देवताओंकी प्रसन्नतासैं तथा पूर्वजन्मके पुण्यकरके नाडीपरिचय होताहै, किंतु अपनेआप पढनेसैं और विना देवकृपाके तथा अधर्मी नास्तिकको नाडी देखनेका ज्ञान नहीं होताहै, अतएव जिसको नाडीज्ञानकी आवश्यकता होवे वो सद्गुरु और देवसेवा तथा धर्ममें तत्पर होय।

नाडीपरिचयो लोके न च कुत्रापि दृश्यते ॥
तेन यत्कथ्यते चात्र तत्समाधेयमुत्तमैः ॥ २२ ॥

अर्थ—नाडीका परिचय अर्थात् नाडीदेखनेका ज्ञान इससंसारमें कहीं नहीं दीखता इसीकारण जो इसग्रंथमें कहाजाताहे वो उत्तमपुरुषोंको अवश्य जानना चाहिये ।

परीक्षणीयाः सततं नाडीनां गतयः पृथक् ॥
न चाध्ययनमात्रेण नाडीज्ञानं भवेदिह ॥ २३ ॥

अर्थ—वैद्यको उचितहे कि निरंतर नाडीकी गतिकी परीक्षा कराकरे क्योंकी केवल पढनेहीसें नाडीका ज्ञान नहीं होता ।

न शास्त्रपठनाद्वापि न बहुश्रुतकारणम् ॥
नाडीज्ञाने मनुष्याणामभ्यासः कारणं परम् ॥ २४ ॥

अर्थ—नाडीके ज्ञानमें शास्त्रपठनसें अथवा बहुतनाडी संबंधी वार्त्ताओंके सुननेसें नाडीका ज्ञान नहीं होता, किंतु नाडीज्ञानमें मनुष्योंको केवल अभ्यासही परम कारणहै इससें अभ्यासकरे ।

नाडीगतिमिमां ज्ञातुं योगाभ्यासवदेकतः ॥
शक्यते नान्यथा वैद्य उपायैः कोटिशैरपि ॥ २५ ॥

अर्थ—वैद्यको इस नाडीकी गति जाननेमें समर्थहोना केवल योगाभ्यासके सदृश नाडीदेखनेके अभ्याससेंही होसकताहे, अन्य करोंडो उपायोंसेंभी नाडी ज्ञान नहीं होता ।

जलस्थलनभश्चारिजीवानां गतिभिः सह ॥
गतयो ह्युपमीयन्ते नाडीनां भिन्नलक्षणाः ॥ २६ ॥

अर्थ—जल, स्थल, और आकाशमें विचरनेवाले जीवोंकी गति (चाल) करकें भिन्नलक्षणा नाडियोंकी गति अनुमान करीजातीहे, अर्थात् जलचर जीव (जोंक मेंडक आदि) स्थलचरजीव (सर्प, हंस, मोर आदि) और आकाशचारीजीव (लवा, बटेर, आदि) ए जैसें चलतेहैं इनके सदृश नाडी चलतीहे, इनमें जिस दोषकी जैसी चाल नाडीकी लिखीहे उसको उसी प्रकारकी देखकर वैद्य नाडीको वातपित्तादिककी नाडी बतावे, अन्यथा नाडी ज्ञान होना कठिनहे ।

कीदृग्गतिस्तत्र विज्ञातव्या विचक्षणैः॥
च तच्छास्त्रं सद्गुरोर्ज्ञानशालिनः ॥ २७॥

अर्थ—वैद्यहोनेवाले प्राणीको उचितहै कि उत्तम ज्ञानवान् शास्त्रके ज्ञाता किस जीवकी कैसी गतिहै इसको सीखे और जो इसनाडी विषयके उनको पढे, किसी जगे हमने ऐसा लिखा देखाहै कि दशवर्षतो वैद्य-ग्रंथ पढे, और गुरूके आगे अनुभव (आजमायस) करे, क्योंकि यह पढनेका समय बहुत उत्तमहै, इस समय ग्रंथ और रोगीदोनो उपस्थि-तहै जो ग्रंथमें पढे उसको गुरूके आगे रोगीपर परीक्षा करे, यदि जो बात समझमें न आवे तो उसको उसीसमय गुरूसें पूछलेय तो संदेह निवृत्तहो फिर दशवर्ष वनमें रहकर वनवासियोंसें अर्थात् माली, काछी, भील, आदिसें औषधका नाम और उसके गुण तथा परीक्षा सीखे तब वैद्यक करनेका अधिकार होताहै।

कल्याणमपि वारिष्टं स्फुटं नाडी प्रकाशयेत्॥
रुजां कालिकवैशिष्ट्याद्भवेत्सापि विलक्षणा॥ २८॥

अर्थ—कल्याण (शुभ) और आरिष्ट (अशुभ) इन दोनोंको नाडी प्र-प्रकाशित करेहै। तथा कालके वैशिष्ट्य करके रोगके समय नाडी होजातीहै।

यल्लक्षणा तु नैरुज्ये नोदितायां तथा रुजि॥
वयःकालरुजां[१] भेदैर्भिन्नभावं बिभर्त्ति सा॥ २९॥

अर्थ—जैसी आरोग्य पुरुषकी नाडी होतीहै ऐसी रोगावस्थामें नहीं र-हती इसका यह कारणहै कि अवस्था, काल, और रोगोंके भेदकरके नाडी भावको धारण करतीहै। अर्थात् विपरीतता ग्रहण करतीहै।

---

१ (वयःकालरुजां भेदैः) इस लिखनेका यह प्रयोजन है कि जैसी नाडी बाल्य अव-स्थामें होती है ऐसी यौवन अवस्थामें नहीं और जैसी यौवन अवस्थामें होती है ऐसी वृद्धा-वस्थामें नहीं होती इसीप्रकार प्रातःकाल, मध्यान्ह, और सायंकालमें पृथक् पृथक् भावसें है तथा प्रत्येक रोगोंमें नाडीकी गति विलक्षण होती है। अर्थात् जैसी ज्वरवान्की नाडी होती है ऐसी अतिसारवान्की नहीं होती और जैसी अतिसारीकी ऐसी ग्रहणीरोग वालेकी नहीं होती। इत्यादि।

तदवस्थामतः प्राज्ञः सर्वथा सार्वकालिकीम् ॥
ज्ञातुं यतेत मतिमान् लक्षणैः सुसमाहितः ॥ ३० ॥

अर्थ—इसीसें चतुर वैद्यको उचितहे कि उस नाडीके सर्वकालकी सदैव लक्षणोंके जाननेका यत्न सावधानता पूर्वक करता रहे ।

नाडीके स्पंदनकाकारण

परिव्याप्याखिलं कायं धमन्यो हृदयाश्रयाः । वहन्त्यः शोणितस्रोतः शरीरं पोपयन्ति ताः ॥ ३१ ॥ हृदयाकुञ्चनाद्रक्तं कियदुत्प्लुत्य धामनीम् । तत्साञ्चितं तदुत्थञ्च प्रविश्य चापरास्वपि ॥ ३२ ॥ व्रजित्वा निखिलं देहं ततो विशति फुप्फुसम् । फुप्फुसाद्धृदयं याति क्रियैवं स्यात्पुनःपुनः ॥ ३३ ॥ रुधिरोत्प्लववेगेन धमनी स्पन्दते मुहुः । उत्प्लवप्रकृतेर्भेदाद्भेदः स्यात्स्पन्दनस्य च ॥ ३४ ॥ स्थौल्यादिकं धमन्याश्च तत्प्रकृत्यैव जायते । तत्प्रकारान्समासेन ब्रुवे वत्स । निशामय ॥ ३५ ॥

अर्थ—अब नाडीके चलनेका कारण कहतेहैं कि हृदयके आश्रित धमनी नाडी संपूर्णदेहमें व्याप्तहो रुधिरको स्रोतके द्वारा वहन करतीहे । उसी रुधिरके वहनेसें शरीरको पोषण करतीहे । उन संपूर्ण धमनी नाडियोंका आश्रय हृदयस्थ रक्ताधार यंत्रहे, रक्ताधार यह एक स्थूलमांसनलिका ऊपरकी तरफ कुछ उठीहुईहे । यह नली समुदाय धमनी नाडीका मूलभागहे । इसी स्थानसें धमनी नाडियोंकी अनेक शाखा प्रशाखा निकलीहे ये सपूर्ण देहमें व्याप्तहे । इस समस्त सूक्ष्म नलाकृति मांसनलीका नाम धमनी है धमनी मार्गसें हृदयका संचित रुधिर सकलदेहमें परिभ्रमण करके देहका पोषण करता है ।

हृदयपंत्र स्वभावसेंही सदैव खुलता मुँदता रहताहै, जैसे भिस्तीकी मछिद्र जलपूर्ण मशकको ऊपरसें दाबनेसें उस मशकके भीतरका जल जैसे छिद्रमें होकर बडेवेगसें निकलताहै, उसीप्रकार हृदयके मुँदनेसें हृदयस्थ रु- । कितनाहीं अंश उछलकर तत्संलग्न स्थूल धमनीमें प्रवेश करेहै । यह

हृदयका मुँदना जितनी देरमें होताहै उतने कालमें वह
धमनियोंके द्वारा समस्त देहमें परिभ्रमण करके फुप्फुसमें जाय-
होताहै, फुप्फुससें फिर दूसरीवार हृदयमें आताहै, और उसीप्रकार
जीतेहुए देहमें इसीप्रकार यह क्रिया एक नियमके साथ वारंवार
है, इस रुधिरके उत्प्लुव (उछलने) सें संपूर्ण धमनी स्पन्दन क-
फडकतीहै। रुधिर हृदयमेंसें वारंवार उछलकर धमनीके छिद्रमें प्रवेश
होकर वेगके साथ चलताहै; इसी कारण धमनी नाडी भी वारंवार तडफ-
तीहै। यह रुधिरके उत्प्लुव प्रकृति भेदसें धमनीके तडफडमें भेद होताहै।
यदि रुधिर मंदवेगसें उछले तो नाडी मंद प्रतीत होतीहै, और रु-
शीघ्र उछले तो नाडीभी शीघ्रचारिणी होतीहै] एवं रुधिरके स्वभावा-
नाडीमें स्थूलता, सूक्ष्मता, और कठिनत्वादि धर्म उत्पन्न होतेहैं। अब
जो अवस्था नाडीसें जैसे जैसे लक्षण होतेहैं उन सबको में आगे कहताहूं

नाडीके नाम

हिंस्रा स्नायुर्वसा नाडी धमनी धामनी धरा।
तन्तुकी जीवितज्ञा च शिरा पर्यायवाचकाः॥ ३६॥

स्नायु, वसा, नाडी, धमनी, धामनी, धरा, तंतुकी, जीवितज्ञा,
शिरा ये नाडीके पर्यायवाचक शब्द है अर्थात् ए नाडीके नामांतरहै।

नाडीके भेद

तत्र कायनाडी त्रिविधा। एका वायुवहा। अन्या
मूत्रविडस्थिरसवाहिनी। अपरा आहारवाहिनीति॥ ३७॥

देहकी नाडी तीन प्रकारकीहै, एक पवनको वहतीहै। दूसरी मल-
हड्डी, और रसको वहतीहै। तीसरी आहारको वहती है।

कन्दमध्ये स्थितानाडी सुषुम्नेति प्रकीर्त्तिता।
तिष्ठन्ते परितः सर्वाश्चक्रेऽस्मिन्नाडिकास्ततः॥ ३८॥

मध्यमें सुषुम्ना नाडी स्थितहै, इसी नाभिचक्र और सुषुम्ना ना-
चारोंतरफ संपूर्ण नाडी स्थितहैं।

नाभिमध्ये स्थितानाडी गोपुच्छाकृतिसर्वतः ।
तिष्ठन्ते परितः सर्वास्ताभिर्व्यातमिदं वपुः ॥ ३९ ॥

अर्थ–संपूर्ण नाडी नाभिके बीचमें गोपुच्छके सदृश स्थित हो सर्वत्र रहीहैं। जिनसें यह देह व्याप्त होरहाहै, जैसें गौकी पूंछ ऊपरके भागमें होतीहै और नीचेको क्रमसें पतली होतीहै. उसीप्रकार नाडीनको जानना, ये सब नाभीसे निकलकर चारोतरफ फैल गईहैं ।

सार्द्धास्त्रिकोट्यो नाड्योहि स्थूलाः सूक्ष्माश्च देहिनाम् ।
नाभिकन्दनिबद्धास्तास्तिर्यगूर्ध्वमधःस्थिताः ॥ ४० ॥

अर्थ–इन मनुष्योंके देहमें छोटी ओर बडी सब मिलकर ३५००००००० साडेतीन करोड नाडीहैं, वो सब नाभिसें बंधीहुई तिरछी, ऊपर, और देहके अधोभागमें स्थितहै।

तिस्रः कोट्योऽर्द्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे ।
नाडीमुखानि सर्वाणि घर्मबिन्दूंक्षरन्ति च ॥ ४१ ॥

अर्थ–ऊपरके श्लोकमें जो साडे तीनकरोड नाडी कहीहैं. वो मनुष्यके देहमें जितने रोमहैं वो सब उन नाडियोंके मुखहैं, उनमें पसीना झडता रहताहै।

द्विसप्ततिसहस्रन्तु तासां स्थूलाः प्रकीर्त्तिताः ।
देहे धमन्यो धन्यास्ताः पञ्चेन्द्रियगुणावहाः ॥ ४२ ॥

अर्थ–उन साडेतीन करोड नाडियोंमें १०७२ एकहजार और बहत्तर स्थूल नाडीहैं, वो धमनी देहमें पवनको धमातीहैं। और पंचेन्द्रियोंके गुण (शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गंध) को वहतीहैं।

आपादतः प्रततगात्रमशेषमेषा-
मामस्तकादपि च नाभिपुरःस्थितेन।
एतन्मृदङ्ग इव चर्मचयेन नद्धम्
कायं नृणामिह शिराशतसप्तकेन ॥ ४४ ॥

... सातसौ नाडीन्सैं मस्तकसैं ले पैरोंतक संपूर्ण देह है जैसैं मृदंगमें सर्वत्र चर्मकी रस्सी खिचिहुई होतीहैं, उसीप्रकार मनु- देह इन सातसौं नाडियोंसैं बन्द्ध होरहीहै।

सप्तशतानां मध्ये चतुरधिकाविंशतिः स्फुटास्तासाम्।
एका परीक्षणीया दक्षिणकरचरणविन्यस्ता ॥ ४५ ॥

१। सातसौं नाडियोमें २४ चौंवीस नाडी मुख्यहैं, उनमेंभी दहने हाथ और पैरमें स्थित मुख्य एक नाडीकी परीक्षा करनी चा- ... इसपदके कहनेसे यह प्रयोजनहै कि धमनी नाडीचो- जैसें लिखाहै।

तिर्यक्कूर्मो देहिनां नाभिदेशे
वामे वक्रं तस्य पुच्छन्तु याम्ये।
ऊर्द्ध्वे भागे हस्तपादौ च वामौ
तस्याधस्तात्संस्थितौ दक्षिणौ तौ ॥ ४६ ॥

वक्त्रे नाडीद्वयं तस्य पुच्छे नाडीद्वयन्तथा।
पञ्च पञ्च करे पादे वामदक्षिणभागयोः ॥ ४७ ॥

अर्थ--मनुष्योंके नाभिदेशमें तिरछा कूर्म (कछवा) स्थितहै, बांई तरफ उसका मुखहै और दहनी तरफ पूंछहै, ऊपरके भागमें बांईतरफ हाथहै, और दक्षिण पैरहै उस कच्छपके मुखमें दोनाडी, पूंछमें दो, और हाथ पैरोंमें और बांई तरफ पांच पांच नाडी जाननी।

फिर उसी श्लोककी व्याख्या करतेहैं "तासां मध्ये एकेति" इस प- ... यह प्रयोजन है कि यद्यपि हाथपैरोंमें पांच पांच नाडीहैं परंतु उ-

१ शतानि सप्त नाड्यस्तु कथिता याः शरीरिणाम्। संभूयांगुष्ठमूले तु शिराभेकामधिष्ठिता।

नमेंभी पुरुषके दहने हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्यहै, और स्त्रीके हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्यहै यह अर्थांशसें जाना जाताहै अत एव वैद्यको इन्हींकी परीक्षा करनी चाहिये जैसे लिखाहै ।

वामे भागे स्त्रिया योज्या नाडी पुंसस्तु दक्षिणे ।
इति प्रोक्तो मया देवि सर्वदेहेषु देहिनाम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—स्त्रीके वामभागकी और पुरुषके दहने भागकी नाडी देखे हेदेवि ! यह सर्व देहधारियोंमें देखनेकी विधि मैंने कहीहै, परंतु जो नपुंसक हैं उनमें प्रथम यह परीक्षाकरे कि यह स्त्रीपंढ है या पुरुषपंढ पश्चात् स्त्रीपंढकी बामहाथकी और पुरुषपंढके दहने हाथकी नाडी देखे इनमें समानता सर्वथा नहीं होसकती, और कृत्रिम (बनेहुये) हिजडे होतेहै उनकी नाडी यथा प्रकृतिमें स्थित होतीहै और " चरणेति " इस पदके धरनेसें कोई कहताहै कि वाम पैरकी नाडीको दहनी गांठके पिछाडीके पार्श्व भागमें देखनी और दहने पैरकी नाडी बाई ग्रंथिके पिछाडीके पार्श्वमें देखनी यह श्रेष्ठ पुरुषोंकी आज्ञाहै कोई छः स्थानोंकी नाडी देखना लिखताहै-यथा ।

अङ्गुष्ठमूले करयोः पादयोर्गुल्फदेशतः ।
कपालपार्श्वयोः षड्भ्यो नाडीभ्यो व्याधिनिर्णयः ॥ ४९ ॥

अर्थ—हाथोंकी नाडी अंगूठेकी जडमें देखे, और पैरोंकी नाडी टकनाओंके नीचे देखे, मस्तककी नाडी दोनों कनपटीयोंमें देखे, इस प्रकार इन छः स्थानकी नाडी देखनेसें व्याधिका यथार्थ निर्णय होताहै ।

नाभ्योष्ठपाणिपात्कण्ठनासोपान्तेषु याः स्थिताः ।
तासु प्राणस्य सञ्चारं प्रयत्नेन विभावयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ—नाभी, होठ, पैर, हाथ, कंठ, और नासिकाके समीप भागमें जो नाडी स्थितहै उनमें प्राणोंके संचारको यत्नपूर्वक जाने, अर्थात् इन स्थानोंमें सदैव प्राण पवनका संचार होताहै, इसीसें अत्यंत उपद्रवमें इन स्थानोंकी नाडी देखनी चाहिये ।

लक्ष्याः षोडश प्राणबोधकाः ॥ ८१ ॥

., पैर, कंठ, नासिका, नेत्र, कान, जिव्हाका अंतभाग और . लिंग) इनके वामभाग और दक्षिणभागमें नाडी देखनी क्योंकि नाडी प्राणबोधकहै ऐसा जानना।

कण्ठनाडी

आगन्तुकं ज्वरं तृष्णामायासं मैथुनं क्लमम् ।
भयं शोकञ्च कोपञ्च कण्ठनाडी विनिर्दिशेत् ॥ ८२ ॥

., तृषा, परिश्रम, मैथुन, ग्लानि, भय, शोक, और कोप रोगोंके कंठनाडी देखकर कहे।

नासानाडी

मरणं जीवनं कामं कण्ठरोगं शिरोरुजाम् ।
श्रवणानिलजान् रोगान्नासानाडी प्रकाशयेत् ॥ ८३ ॥

अर्थ—मरण, जीवन, कामबाधा, कंठरोग, मस्तकरोग, कानके, और रोगोंको नासिकाकी नाडी प्रकाशित करतीहै।

उक्त नाडियोंका प्रमाण

हस्तयोश्च प्रकोष्ठान्ते मणिबन्धेऽङ्गुलिद्वयम् । पादयोर्नाडिकास्थानं गुल्फस्याधोऽङ्गुलिद्वयम् ॥ ८४ ॥ कण्ठमूलेऽङ्गुलिद्वंद्वं नासायामङ्गुलिद्वयम् । एवमप्यङ्गुलिद्वंद्वमग्रतः कर्णरन्ध्रयोः ॥

अर्थ—अब अन्यनाडी किस किस भागमेंहै और वो कितनी बडीहै यह है। तहां दोनो हाथके प्रकोष्ठान्तमें जहां मणिबंध अर्थात् पहुंचाहै उ- दो अंगुल नाडी देखनेका स्थानहै और पैरोंमें टकनाके नीचे दो अंगुल स्थानहै तथा कंठकी जडमें अर्थात् हसलीमें दो अंगुल एवं नासि- दो अंगुल नाडीका स्थानहै। इसी प्रकार दोनो कर्णके छिद्रके अग्र- भी दो दो अंगुल नाडीके परीक्षाका स्थानहै। तात्पर्य यहहै कि जब नाडी प्रतीत न होवे तब इन स्थानोंकी नाडी देखनी।

निस्तुपयवएकस्तत्प्रमाणाङ्गुलं स्यात्
तदुभयमितसञ्ज्ञन्येव नाडीप्रचारः ।
न भवति यदि तस्मिन् गेहिनी गेहमध्ये
कथमिह गृहमेधी तत्र जीवस्तदा स्यात् ॥ ५६ ॥

अर्थ–छिलका रहित एक यवके प्रमाण इस जगे अंगुल मानाहै। दो अंगुल प्रमाण स्थानमें नाडी रहती है यदि देहरूप घरमें नाडीरूप स्त्री न होवे तो जीवरूप जो गृहस्थीहै सो क्याकरे, अर्थात् यावत्काल नाडी रहतीहै तवतक जीवहै विना स्त्रीके घरमें रहना निंदितहै " धिग्गृहं गृहिणींविना " तात्पर्य यहहै कि जीव पुरुष-नाडी स्त्री, ये अन्योन्यएकके विन दूसरा नहीं रहसकता।

परीक्षणीय

वातं पित्तं कफं द्वंद्वं सन्निपातं तथैव च ।
साध्यासाध्यविवेकश्च सर्वं नाडी प्रकाशयेत् ॥ ५७ ॥

अर्थ–वात पित्त कफ द्वंद्वज दोष और सन्निपात एवं साध्यासाध्य [चकारसें कष्टसाध्य] इनकी संपूर्ण विवेचनाको नाडी प्रकाशित करती है।

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण सङ्कलिते नाडीदर्पणे प्रथमावलोकः

नाडीज्ञानसमय

प्रातः कृतसमाचारः कृताचारपरिग्रहम् ।
सुखासीनः सुखासीनं परीक्षार्थमुपाचरेत् ॥ १ ॥

अर्थ–अब नाडी देखनेका समय कहतेहैं कि चिकित्सक प्रातःकालमें प्रातःकृत्य समाप्तिके अनंतर नाडीपरीक्षार्थ रोगीके समीप प्राप्त हो रोगीके प्रातःकृत्य समाप्तिके पश्चात् उसको सुखपूर्वक बैठाकर इसीप्रकार आप सुखपूर्व बैठकर यथाविधान नाडी परीक्षा करे। इसजगे प्रातःकालका तो उपलक्षण मात्रहै किंतु मध्यान्ह और सायंकालमें भी नाडी परीक्षा जैसे लिखाहै " मध्यान्हे चोष्णतान्विता " इत्यादि।

निषिद्धकाल

भुक्तस्य क्षुत्तृष्णातपसेविनः । व्यायामाक्रा-
सम्यङ् नाडी न बुध्यते ॥ २ ॥ तैलाभ्यक्ते
भोजनान्ते तथैव च । उद्वेगादिषु नाडी च न
॥ ३ ॥

अर्थ—तत्काल स्नानकराहो, तत्काल भोजन कराहो, अथवा "सुप्तस्य" निद्रित, क्षुधित, तृषार्त, गरमीसें घबडाया हुआ तथा व्यायाम-देह जिसका ऐसे मनुष्यकी नाडी भलेप्रकार प्रतीत नही हो, उसी-जिसने तेल लगायाहो, मैथुनान्तमें भोजनके मध्यमें उद्वेग आदि समयमें यथार्थगति निश्चय नही हो, अतएव वैद्य इन समयोंमें नाडीपरीक्षा किंतु रोगीका चित्त जिससमय स्वस्थहोय तब नाडी देखे, परंतु वा-क्षणिक रोगोंमें यह उक्तनियम नहींहै ।

नाडीदेखने योग्य वैद्य

स्थिरचित्तः प्रसन्नात्मा मनसा च विशारदः ।
स्पृशेदङ्गुलिभिर्नाडीं जानीयाद्दक्षिणे करे ॥४॥

अर्थ—अब नाडी देखने योग्य वैद्य कहते हैंकि जो स्थिरचित्त और प्रसन्न आत्मा तथा मनकरके चतुर ऐसा वैद्य तीन उंगलियोंसें दहने हाथकी स्पर्श करके उसकी गतिकी परीक्षा करे ।

मूढ वैद्य

पीतमद्यश्चलात्मा मलमूत्रादिवेगयुक् ।
नाडीज्ञानेऽसमर्थः स्याल्लोभाक्रान्तश्च कामुकः ॥ ५ ॥

अर्थ—जिसने मद्य पीरक्खाहो, और चंचल चित्त, मल मूत्र बाधा लग लोभी और कामीहो ऐसे वैद्यको नाडी न दिखावे, क्योंकि यह जाननेमें असमर्थ है ।

---

* सुप्ते च तथा च भोजनान्तरे । तथा न ज्ञायते नाडी यथा दुर्गतरा नदी ॥ इति

नाडी देखने योग्य रोगी

त्यक्तमूत्रपुरीषस्य सुखासीनस्य रोगिणः ॥
अन्तर्जानुकरस्यापि नाडी सम्यक् प्रबुद्ध्यते ॥ ६ ॥

अर्थ–अब नाडी देखनेके योग्य रोगी कहतेहैं कि जो मलमूत्रका त्याग करचुकाहो, और सुखपूर्वक घोंटुओंके भीतर हाथको करे गा.. नीसें बैठाहो, ऐसे रोगीकी नाडीको वैद्य देखे, क्योंकि ऐसे मनुष्यकी भली रीतिसें जानी जातीहैं।

नाडीदर्शनमेंअयोग्य प्राणी

धूर्त्तमार्गस्थविश्वासरहिताज्ञातगोत्रिणाम् ॥
विनाभिशंसनं वैद्यो नाडीद्रष्टा च किल्बिषी ॥ ७ ॥

अर्थ–अब कहतेहैं ऐसे मनुष्योंकी नाडी वैद्य न देखे, कि जो धूर्तहे मार्गमें चलते चलते दिखाने लगे, और जिसको विश्वास नहीहैं, जिसकी जातपाँति वैद्य नहीं जाने, और विनकहे अर्थात् जबतक थवा उस रोगीके बांधव न कहे तबतक वैद्य नाडी न देखे, यदि की वैद्य नाडी देखेतो पाप भागी होताहै।

हाथको हटाय नाडीको दाबे, और बाए हाथसैं रोगीके हाथको
नाडीकी परीक्षा करे।
इसवास्ते " दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण " यह पद केवल उपलक्षण मा-
किंतु नाडी वामहाथसैं भी देखे यदि ऐसा न मानोंगे तो फिर अ-
देखना किसप्रकार होगा। और बाजे वैद्य दहने हाथकी नाडी
और वामहाथकी दहनेसैं देखतेहैं यह ठीकहै।
कदाचित् कोई शंकाकरे कि एकही हाथकी नाडी देखनेसैं रोग जाना-
फिर दोनों हाथकी देखना व्यर्थहैं, इसलिये कहतेहैं कि बहुतसे म-
वामअंगही चेष्टावाले होतेहैं, अतएव ऐसे मनुष्योंके वामअंगकी न-
नहीं देखीजाय तबतक यथार्थ ज्ञान नहीं होता। दूसरे दोषोंके
नाडीके वाम दक्षिणमें भेद होजाताहै, अथवा यह परंपराहै, इसीसैं लो-
देखतेहैं।

दूसरा प्रकार

ईषद्विनामितकरं विततांगुलीयं
बाहुप्रसाररहितं परिपीडनेन ॥
ईषद्विनम्रकृतकूर्परवामभाग-
हस्ते प्रसारितसदंगुलिसंधिके च ॥ ९ ॥
अंगुष्ठमूलपरिपाश्चिमभागमध्ये
नाडीप्रभंजनगतिं प्रथमं परीक्षेत् ॥ १० ॥

अर्थ—वैद्य रोगीके हाथको किंचिन्मात्र नवायकर और हाथकी उंगलि-
एकत्र कर तथा भुजाकों बहुत लंबी न होनेदे और हाथ पट्टी आदिसैं
न हो क्योंकि पट्टीआदिके बंधनसैं नाडीकी गति रुकजातीहै फिर रोगीके
(कोहनीके वामभाग) को पकड अंगुली और उनकी संधिसहित हाथ-
रोगीके अंगुठेके पिछलेभागमें प्रथम वातकी परीक्षा करे, कारण
कि आदिमें वातका स्थानहै अतएव प्रथम वातकी परीक्षा करनी चाहिये।

प्रदर्शयेद्दोषनिजस्वरूपं व्यस्तं समस्तं युगलीकृतं च ॥
मूकस्य मुग्धस्य विमोहितस्य दीपप्रभावा इव जीवनाडी ॥ ११ ॥

अर्थ—यह जीवनाडी गूंगेके मूढके और मोहितपुरुषके पृथक् पृथक् मिले तथा द्वंद्वज दोषोंका जो निज स्वरूप है उसको दिखाती है, जैसें दीपक अपने प्रकाशसें घरमें स्थित पदार्थोंको दिखाता है।

स्त्रीणां भिषग्वामहस्ते वामे पादे च यत्नतः ॥ शास्त्रेण संप्रदायेन तथा स्वानुभवेन च ॥ परीक्षेद्रत्नवच्चासावभ्यासादेव जायते॥१२॥

अर्थ—वैद्य स्त्रियोंके वामहाथ और वामपैरमें शास्त्रकी संप्रदायसें और अपने अनुभवद्वारा रत्नके समान नाडी परीक्षा करे, यह परीक्षा केवल अभ्याससाध्य है. तात्पर्य यह है कि जैसें जौंहरी रत्नपरीक्षामें अभ्यास करनेसें रत्नकी परीक्षा करता है उसीप्रकार इस नाडीका देखनाभी रत्नपरीक्षाके समान है, अतएव इसके देखनेमें वैद्य अभ्यास करे।

देखी है यदि उसके रोग प्रगटहोनेवाला होवे तो उस रो-
नाडीद्वारा बहुत सुगमतासें हो सकता है इसीसें लिखाहै यथा।

सुस्थनाडीपरीक्षणम् ॥ १४ ॥

होनहार रोगज्ञानके अर्थ वैद्यको स्वस्थ (रोगरहित) म-
करनी चाहिये।

जायते भिषक् ॥ त-
सुस्थानामपि देहिनाम् ॥ १५ ॥
॥ तासु जी-
सञ्चारं प्रयत्नेन निरूपयेत् ॥ १६ ॥

लिखा है कि-स्पर्शनादिके अभ्याससें अर्थात् प्रत्ये-
देखनेसें यह वैद्य नाडीका ज्ञाता होता है, अतएव यह वैद्य स्व-
नाडी देखाकरे, उस नाडीके स्पर्शसें, पीडन (दाबनें) सें,
ऊंगलियोंमें लगनेसें) वेदन (तडफ) सें और मर्दन करना इन का-
वैद्य उन नाडियोंके जीवसंचारको निरूपण करे।

गुरुतोऽत्र प्रयत्नेन वैद्येन शुभमिच्छता ॥
ज्येष्ठेनांगुष्ठमूलेन नाडीपुच्छं परीक्षयेत् ॥ १७ ॥

यत्नपूर्वक गुरुसें अर्थात् गुरुद्वारा अंगुठेकी जडमें ना-
परीक्षा करे, तात्पर्यार्थ यह है कि जो वैद्य अपने हितकी चाह-
वो गुरुद्वारा नाडीपरीक्षा सीखे स्वयंही न देखनेलगे, ज्येष्ठ कहनेसें
बृहन्निम्नभाग जानना।

नाडीं वायुप्रवाहेन शास्त्रं दृष्ट्वा च बुद्धिमान् ॥
गुरूपदेशं संस्मृत्य परीक्षेत मुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥

पवनके संचार करके और शास्त्रके अनुसार तथा
उपदेशको स्मरणकर वारंवार नाडीकी परीक्षा करे।

वारत्रयं परीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ॥
विमृश्य बहुधा बुद्ध्या रोगव्यक्तिं तु निर्दिशेत् ॥ १९ ॥

अर्थ–वारंवार नाडीपर उँगली रखे और हटायले अर्थात् नाडीको दबायके ढीली छोडदेवे इसप्रकार करनेसें नाडीकी सबलता और नि चौडाव लंबाव तथा शीघ्रता और मंदताका ज्ञान होता है । इसप्रकार तीन वार परीक्षाकर संपूर्ण नाडीकी व्यवस्था अपने मनमें विचार कर फिर रोग- व्यक्ति कहे अर्थात् इसरोगीके देहमें अमुक रोगहै ऐसे विना विचारे न कहे ।

अंगुलित्रितयैः स्पृष्ट्वा क्रमाद्दोषत्रयोद्भवैः ॥
मन्दां मध्यगतां तीक्ष्णां त्रिभिर्दोषैस्तु लक्षयेत् ॥ २० ॥

अर्थ–नाडीको तीन उँगलियोंके स्पर्शसें तीनोदोषोंकरके मन्द, मध्य, और तीक्ष्ण गति जाननी, अर्थात् प्रथम उँगलीमें मध्यस्पर्शहोनेसें वातकी, और बीचकी उँगलीमें तीक्ष्णस्पर्श होनेसें पित्तकी, और अंतकी उँगली (अ- नामिका) में मंदस्पर्श होनेसें कफकी नाडी जाननी ।

रोगरहितमनुष्यकी नाडी

भूलता भुजगप्राया स्वच्छा स्वास्थ्यमयी शिरा ॥
सुखितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥ २१ ॥

अर्थ–स्वस्थ अवस्थाकी नाडी केंचुआ और सर्पके समान टेढी गतिसें और पुष्ट तथा जडता रहित होती है यह नैरोग्य पुरुषकी नाडीके लक्षण है तथा सुखी पुरुषकी नाडी स्थिर और बलवान् होती है ।

नाडीके देवता

वातनाडी भवेत् ब्रह्मा पित्तनाडी च शंकरः ॥
श्लेष्मनाडी भवेद्विष्णुस्त्रिदेवा नाडिदेवताः ॥ २२ ॥

अर्थ–वातनाडीका ब्रह्मा, पित्तनाडीका शंकर, और कफनाडीका पति विष्णु है ।

नाडीन्के वर्ण

वातनाडी भवेन्नीला पित्तनाडी तु पाण्डुरा ॥
श्वेता तु कफनाडी स्यादेवं वर्णान् संवदेत् ॥ २३ ॥

अर्थ–वातकी नाडीका वर्ण नील है, पित्तकी नाडीका पीला, कफना- डीका श्वेत, इसप्रकार नाडीके वर्ण कहने चाहिये ।

नाडीन्का स्पर्श

भवेदुष्णा कफनाडी तु शीतला ॥
वातनाडी भवेन्मध्या एवं स्पर्शविनिर्णयः ॥ २४ ॥

नाडी स्पर्श करनेसैं गरम प्रतीत होतीहै, कफकी नाडी शी-
और वातकी नाडीका स्पर्श मध्यम होताहै इस प्रकार नाडीका
।

कालपरत्व नाडीकी गति

प्रातः स्निग्धमयी नाडी मध्यान्हे चोष्णतान्विता ॥
सायान्हे धावमाना च रात्रौ वेगविवर्जिता ॥ २५ ॥

अर्थ—स्वभावसैंही नाडी प्रातःकाल स्निग्ध, मध्यान्हमें उष्ण, और सा-
वेगवती, तथा रात्रिमें वेगवर्जित होतीहै।

अथ वातादिस्वभावक्रम

आदौ च वहते वातो मध्ये पित्तं तथैव च ॥
अन्ते च वहते श्लेष्मा नाडिकात्रयलक्षणम् ॥ २६ ॥

अर्थ—अब वातादिकका स्वभाव क्रम कहतेहै, जिस समय वैद्य कोहनीको
है। उसके द्वितीयक्षणमें प्रथम वातकी नाडी फिर मध्यमें पित्तकी
अंतमें कफकी नाडी चलती है। यह द्वितीयादिक्षणोंमें जाननी। कोई
है कि आदिमें वातकी बीचमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी च-
है यह बात सर्वथा निर्मूल है क्योंकि स्थानका नियम किसी जगे नहीं
करा, विशेष आगे कहते है यथा।

उक्त श्लोकका विरोधीवचन

आदौ च वहते पित्तं मध्ये श्लेष्मा तथैव च ॥
अन्ते प्रभञ्जनो ज्ञेयः सर्वशास्त्रविशारदैः ॥२७॥

अर्थ—आदिमें पित्तकी मध्यमें कफकी और अंत्यमें वातकी नाडी सर्व
वैद्योंकरके जाननी।

1 चिराद्रोगविवर्जितेति पाठान्तरम्।

नाडीचक्रमिदम्

वात	पित्त	कफ	नाडीके नाम
स्याम हरित	पीत लाल नील·	सपेद	नाडीके वर्ण
ब्रह्मा	शिव	विष्णु	नाडीके देवता
न गरम न शीतल किंतु मध्यम	गरम	शीतल	नाडीका स्पर्श
विसम	दीर्घ	न्हस्व	नाडीमाप
गंधहीन	तीव्रगंध	मध्यमगंध	नाडीकी गंध
तिर्यग्गमन	ऊर्ध्वगमन	अधोगमन	नाडीका गमन
हलकी	हलकी	भारी	नाडीका गुरुता और लघुता
रात्रिदिवाबली	दिवाबली	रात्रिबली	नाडीके बलवान् होनेका समय

उक्त श्लोकका पुष्टिकर्त्ता दृष्टान्त

तृणं पुरःसरं कृत्वा यथा वातो वहेद्बली ॥ शेषस्थंच तृणं गृह्य पृथिव्यां वक्रगो यथा ॥ २८ ॥ एवं मध्यगतो वायुः कृत्वा पित्तपुरस्सरम् ॥ स्वानुगं कफमादाय नाड्यां वहति सर्वदा ॥ २९ ॥

अर्थ—इस वाक्यको दृष्टान्त देकर पुष्ट करतेहैं कि जैसे प्रबलवात अर्थात् आंधी, तिनकाओंको अगाडी करके और कुछ पिछाडीके तिनकाओंको लेकर आप बीचमें टेढी होकर चलतीहै।इसीप्रकार मध्यगत वायु पित्तको अगाडीकर और अपने पिछाडी कफको करके बीचमें आप टेढी होकर ।

अतएव च पित्तस्य ज्ञायते कुटिलागतिः । वक्रा प्रभञ्जनस्यापि प्रोक्ता मन्दा कफस्य च ॥ ३० ॥ पित्ताग्रेऽस्ति गतिः शीघ्रा तृणस्येति विदृश्यताम् ॥ मन्दानुगस्य वक्रा वै मारुतो मध्यगस्य ह ॥ ३१ ॥ तथात्रैव च ज्ञातव्या गतिर्दोषत्रिकोद्भवा ॥ नान्यथा ज्ञायते स्नायुगतिरेतद्विनिश्चितम् ॥ ३२ ॥

गति कुटिलहै, और वातकी गति टेढी एवं क-
प्रतीत होतीहै। पित्तकी शीघ्रगति सो आंधीमें तृणके देखनेसें
। और जैसें आंधीमें पिछाडीके तृणकी मंदगति होतीहै उसी
पिछाडी कफकी मंदगतिहै। और जैसें आंधीके बीचमें पवन-
तिरछी होतीहै। उसीप्रकार इसनाडीके बीचमें वातकी गति
प्रतीत होतीहै इसप्रकार ही नाडीकी गति प्रतीत होतीहै। अन्य
।

हमको शंकाहै कि नाडीका और आंधीका क्या संबंधहै, क्योंकि
आगे पीछे और बीचमें पवनही कहातीहै, परंतु नाडीमें तो न्यारे
जैसे वात, पित्त, तथा कफ, और पवनका एकही कर्महै परंतु
दोषोंके कर्म पृथक् पृथक् है, इस कारण यह दृष्टान्तही असंभवहै
हरण कर्त्ता नहींहै।

ग्रंथकर्त्ताकामत

इदानीं कथयिष्यामि स्वमतं शास्त्रसंमतम् ॥ मिथ्या-
रोपितवादस्य खण्डनं लोकरञ्जनम् ॥ २३ ॥ वातम-
ग्रे वदन्त्येके पित्तमग्रे च केचन ॥ हास्यास्पदमिदं
सर्वं न तु सत्यं मनागपि ॥ २४ ॥

हम शास्त्रसंमत तथा मनुष्योंकी रंजना (प्रसन्नता) को और
वादका खंडनरूप अपने मतको कहतेहै। जैसे कोई तो वातकी
पित्तकी नाडीको आगे बतलाताहै, यह केवल उनके हास्यका
किंतु किंचिन्मात्रभी सत्य नहींहै इसप्रकार माननेसें बडाभारी अन-
जैसें आगे लिखतेहै।

पित्तभवे व्याधौ वुद्ध्यतिक्रमतो यदि ॥ वातकोपवशादेव-
ज्ञात्वा धरागतिम् ॥ २५ ॥ प्रदद्भेषजं ह्युष्णं तद्दोषविनि-
॥ तदा नूनं भवेन्मृत्युः पित्तकोपेन भूयसा ॥ २६ ॥

किसीरोगीके पित्तकी व्याधि होवे और वैद्य बुद्धिभ्रमसें
नाडी अवगानमें समझकर उस रोगीके दोष दूर करनेको उस

उष्ण (शुंठ्यादि) औषध देय तो कहो एक तो पित्तदोषकी गरमी और सरे गरम ही दीनी औषध अब कहो वह रोगी पित्तकी गरमीके मारे मरेगा कि बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा।

सति वातभवे व्याधौ बुद्ध्यतिक्रमतो यदि ॥ नाडीगतिं पित्तवशादादौ ज्ञात्वा ततो भिषक् ॥ ३७॥ प्रददेद्भेषजं शीतं तद्दोषविनिवृत्तये ॥ तदा नूनं भवेन्मृत्युर्वातकोपेन भूयसा ॥ ३८ ॥

अर्थ—इसीप्रकार रोगीके देहमें वातजन्य रोग होय और वैद्य बुद्धिके भ्रमसें पित्तकी नाडी जानकर यदि उसरोगीको पित्तनाशक शीतल उपचार करे तो कहो अत्यंत शरद औषधसें रोगी सरदीके मारे मरेगा या बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा ।

अत्याश्चर्यमिदं लोके वर्त्तते दृश्यतां यथा ॥ वदन्त्येके दिनं रात्रिं केऽपि रात्रिं दिनं तथा ॥३९॥ एवं स्वेच्छाभिलापेन स्वल्पलोभेन मानवाः ॥ रोगिणां सुप्रियान्प्राणान्हरन्ति ज्ञानवर्जिताः ॥ ४० ॥

अर्थ—इस संसारमें अत्यंत आश्चर्यहै देखो कोई दिनको रात्रि और कोई रात्रिको दिन कहताहे। इसप्रकार अपनी अपनी इच्छानुसार बकतेहै और ए मूर्ख वैद्य थोडेसें लोभके कारण रोगियोंके परमप्रिय प्राणोंको हरण करतेहे । कहो इनसें बढकर कोन पामरहे जो विना विचारे अनर्थ करतेहै भाई यह वैद्यविद्या खेल नहींहे ।

अतएवं मया चित्ते सर्वमानीय तत्त्वतः ॥ कथ्यते नास्ति नास्तीह नाडीस्थानविचारणा ॥ ४१ ॥ किन्तु नाडीगतिः श्रेष्ठा शास्त्रकारैः प्रकीर्त्तिता ॥ न च तत्राहि सन्देहो लेशमात्रोऽपि विद्यते ॥ ४२ ॥ तत्प्रकारोप्ययं ज्ञेयः सावधानतया किल ॥ यथा सर्पजलौकादिगतिर्वातस्य गद्यते ॥ ४३ ॥ न तत्र कुरुते कोऽपि पित्तश्लेष्मभवं भ्रमम् ॥ कुलिङ्गकाकमण्डूकगतिः पित्तस्य कीर्त्यते ॥ ४४ ॥ न तत्र कोऽपि कु-

भ्रमम् ॥ कपोतानां मयूराणां हंसकुक्कु-
॥ ४५ ॥ या गतिः सा च विज्ञेया कफस्यैव गति-
॥ न तत्र कोऽपि कुरुते वातपित्तभवं भ्रमम् ॥ ४६ ॥
ऊपरकहेहुए सर्वकारणोंको अपने चित्तमें भलेप्रकार विचार-
कि नाडीके जो आदि मध्य और अंत्य ये स्थान किसीनें
वहीं हैं नहींहैं। तो क्याहै? इसलिये कहतेहैं कि नाडीकी जो ग-
सत्यहै क्योंकि इसमें सर्वग्रंथकर्त्ताओंकी संमतिहै और इसमें लेश-
संदेह नहींहै, उसप्रकारको तुम सावधानताकरके सुनो, जैसें सर्प
गति वातकीहै इसमें कोई भ्रम नहीं करे कि यह पित्तकी ना-
कफकी उसीप्रकार कुलिंग काक और मंडूककी गति पित्तकीहै इ-
तथा कफकी नाडीका कोई भ्रम नहीं करता; इसीप्रकार कपोत मो-
और कुक्कुट इनकी जो गतिहै वह कफकी है इसमें कोई यह नहीं कहे
गति कफकी नहींहैं वातपित्तकी है, इसीसें हमारा तो यही सिद्धांतहै
स्थान असत्य और गति सत्यहै।

वातादिकोंकीक्रमसें गति

वाताद्वक्रगता नाडी चपला पित्तवाहिनी ॥
स्थिरा श्लेष्मवती ज्ञेया मिश्रिते मिश्रिता भवेत् ॥ ४७ ॥
तिरछी वहतीहै, अतएव वातकी नाडी टेढी चलतीहै, अग्नि-
हो ऊपरको जातीहै अतएव पित्तकी नाडी ऊपरकी तरफ वहतीहै
चपलहै, जल नीचेको जाताहै, इसीसे प्रबल नहींहै अतएव कफकी
स्थिरहै और जो मिश्रित नाडीहै उनकी गतिभी मिलीहुई होतीहै
दिखाया कि द्विदोषजमें दोदोषके चिन्ह होतेहैं, त्रिदोषजमें तीनों
चिन्ह होतेहैं, कदाचित् कोई प्रश्न करे कि एकही नाडी चपल औ-
कैसें होसकतीहै।इस्सें कहतेहैं कि समय भेद होनेसें दोनों गति होसकतीहैं

वातादिकी विशेषगति

सर्पजलौकादिगतिं वदन्ति विबुधाः प्रभञ्जने नाडीम् ॥
पित्ते च काकलावकभेकादिगतिं विदुः सुधियः ॥४८॥

राजहंसमयूराणां पारावतकपोतयोः ॥
कुक्कुटादिगतिं धत्ते धमनी कफसंवृता ॥ ४९ ॥

अर्थ—सर्प और जोखकी गति पंडित जन वातकी नाडिकी गति कहतेहैं, अर्थात् जैसें सर्प और जोख टेढे तिरछे होकर चलतेहैं उसीप्रकार वादीकी नाडी चलतीहै । आदि शब्दसें विच्छूकी गतिका ग्रहणहे । उसी प्रकार पित्त-में काक (कौआ) लावक (लवा) और भेक (मेंडका) की गतिके सदृश नाडी चलती है अर्थात् जैसे कौआ, लवा, और मेंडका भुदकते उछलते चलतेहैं उसी प्रकार पित्तकी नाडी चलतीहै । आदिशब्दसें कुलिंग और चि-डा आदिकी गतिका ग्रहणहे । एवं राजहंस (वतक) मोर, खबूतर, कपोत (पिंडुकिया) और मुरगा इन पक्षियोंकीसी अर्थात् ए पक्षी जैसें मंदमंद गति चलतेहे इसप्रकार कफकी नाडी चलतीहे । आदिशब्दसें हाथी और उत्तम स्त्रीकी चालका ग्रहण हे अर्थात् जैसे हाथी और उत्तम स्त्री झूमती हुई मंद मंद चलतीहे इसी प्रकार कफकी नाडी चलतीहै।

द्वंद्वजनाडीकी चाल

मुहुः सर्पगतिं नाडीं मुहुर्भेकगतिं तथा ॥ वातपित्तद्वयोद्भूतां प्रवदन्ति विचक्षणाः ॥ ५० ॥ भुजगादिगतिं चैव राजहंसग-तिं धराम् ॥ वातश्लेष्मसमुद्भूतां भाषन्ते तद्विदो जनाः ॥५१॥ मण्डूकादिगतिं नाडीं मयूरादिगतिं तथा ॥ पित्तश्लेष्मसमुद्भू-तां प्रवदन्ति महाधियः ॥ ५२ ॥

अर्थ—वारंवार सर्पगति (टेढी) और वारंवार मेंडकाकी गति (उछलती) नाडी चले उसको चतुरवैद्य वातपित्तकी नाडी कहतेहें । तथा कभी सर्पगति और कभी राजहंसकी गतिमें नाडी चले उसको पंडितजन वातकफकी नाडी कहतेहें । एवं कभी मेंडक और कभी मोरकी चाल चले उस नाडीको पि-त्तकफकी बुद्धिमान् वैद्य कहतेहें ॥

प्रकारान्तर

वातेऽधिके भवेन्नाडी प्रव्यक्ता तर्जनीतले ॥ पित्ते व्यक्ता म-ध्यमायां तृतीयांगुलिगा कफे ॥ ५३ ॥ तर्जनीमध्यमामध्ये

स्फुटा॥ अनामिकायां तर्जन्यां व्यक्ता वातक-
८४ ॥ मध्यमानामिकामध्ये स्फुटा पित्तकफेऽधि-
अंगुलित्रितयेऽपि स्यात्प्रव्यक्ता सन्निपाततः ॥ ८५ ॥
नाडी तर्जनीके नीचे चलतीहै । पित्तकी नाडी मध्यमा
। और कफकी नाडी तीसरी ऊंगली अर्थात् अनामिकाके
। वातपित्तकी नाडी तर्जनी और मध्यमाके नीचे चलतीहै।वा-
नाडी अनामिका और तर्जनीके नीचे चलतीहै । मध्यमा और अ-
नीचे पित्तकफाधिक नाडी चलतीहै । और तीनो ऊंगलियोंके नी-
नाडी गमन करतीहै ।

चलति धमनी वातपित्ततः ॥ वहेद्वक्रंचमन्दञ्च
त्वचः ॥ ८६ ॥ उत्प्लुत्य मन्दं चलति नाडी
॥

अर्थ—वातपित्ताधिक्यसें नाडी टेढी और उछलती हुई चलतीहै । वात-
और मन्द गमनकरतीहै । पित्तकफाधिक्यमें नाडी उछलीहुई मंद
।

त्रिदोषकी नाडी

उरगादिलावकादिहंसादीनांच बिभ्रती गमनम् ॥ ८७ ॥
वातादीनांच समं धमनी सम्बन्धमाधत्ते ॥
त्रिदोषके समान होनेसें नाडी सर्प, लवा, और हंस आदि
समान गमन करतीहै। समके कहनेसें न्यूनाधिक्यका त्यागहै यदि
दोषोंकी क्रमसें चले तो असाध्य नहींहै ।

सन्निपाततः ॥ ८८ ॥ कदाचिन्म-
न्दगमना कदाचिच्छीघ्रगा भवेत् ॥ त्रिदोषप्रभवे रोगे विज्ञे-
या हि भिषग्वरैः ॥ ८९ ॥
अर्थ—लवा तीतर और बटेरकी चाल नाडी संनिपातके कोपसें करतीहै
मंदगमन करे, और कभी शीघ्रगमनकरे, ऐसी नाडी त्रिदोषजन्य रोगमें

वैद्योंको जाननी चाहिये इस त्रिदोषमें पित्तके क्रमसें साध्यासाध्य और कृच्छ्रसाध्य जानना अर्थात् अधिकपित्तसें साध्य, मध्यसें कष्टसाध्य और पित्त सर्वथा नाडीमें न होयतो वह रोगी असाध्यहे ।

सामान्यतापूर्वकसुखसाध्यत्व

यदा यं धातुमाप्नोति तदा नाडी तथागतिः ॥
तथा हि सुखसाध्यत्वं नाडी ज्ञानेन बुध्यते ॥ ६० ॥

अर्थ–नाडी जिससमय जिसधातुमें प्राप्तहोय उससमय यदि उसका प्रकृति अनुसार चलना होय तो पीडा सुखसाध्य ऐसे नाडीज्ञानकरके जानी जातीहे इसका निष्कृष्टार्थ यहहे कि अपरान्हादि कालमें वातोल्वणा ,नाडी प्रथम वातकी गति करके चले, फिर क्रमसें पित्त और कफकी चालचले, किंतु पित्तोल्वणा वातगतिसें न चले तो सुखसाध्य जाननी यदि इस्से विपरीत होय तो विपरीत अर्थात् असाध्य जाननी जैसे किसीने कहाहे " नाडी यथा कालगतिस्त्रयाणां प्रकोपशान्त्यादिभिरेव भूयः "

असाध्यत्व

मन्दं मन्दं शिथिलशिथिलं व्याकुलं व्याकुलं वा
स्थित्वा स्थित्वा वहति धमनी याति नाशं च सूक्ष्मा ॥
नित्यं स्थानात्स्खलति पुनरप्यंगुलिं संस्पृशेद्वा
भावैरेवं बहुविधविधैः सन्निपातादसाध्या ॥ ६१ ॥

अर्थ–जो नाडी कभी प्रसरतारहित मंदमंद गमन करे, कभी स्खलित भावसें कभी व्याकुल व्याकुलवत् (जैसें त्रासित मनुष्य चलताहे) कभी ठहर ठहरके चले और जो संपूर्ण रूपसें लुप्तहोजाय अथवा बहुत सूक्ष्म वहे अर्थात् यह प्रतीत नहोय कि यह नाडी चलेहे या नहीं चले और जो नित्यस्थान अर्थात् अंगुष्ठमूलको परित्यागकरदे, इसीप्रकार कुछकालमें फिर अपने स्थानमें प्रगटहोय ऊंगलियोंको आघातकरे, ऐसे अनेक प्रकारके भावोंकरके नाडीको मृत्युकी कारण जाननी ।

शीतत्वं शीतत्वे तापिता शिरा ॥
नानाविधगतिर्यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः॥६२॥

प्राणीके देहमें अत्यंत ताप होय परंतु नाडी शीतल होय, अत्यत शीतल होय और नाडी उष्ण प्रतीतहो, तथा जिसनाडीकी गति होय उसरोगीकी निश्चय मृत्यु होय, इस श्लोकमें महादाहके निवारणार्थहै।

त्रिदोषे स्पन्दते नाडी मृत्युकालेऽपि निश्चला ॥ ६३ ॥

मृत्युकालमें भी नाडी सामान्य भावसें चलतीहे अतीसारादि रोगोंमें हाथपैरमें स्वेदादिक करनेसें नाडीका तड-होताहे।

पूर्वं पित्तगतिं प्रभञ्जनगतिं श्लेष्माणमाबिभ्रतीम्
स्वस्थानभ्रमणं मुहुर्विदधतीं चक्रादिरूढामिव ॥
तीव्रत्वं दधतीं कलापिगतिकां सूक्ष्मत्वमातन्वतीम्
नो साध्यां धमनीं वदन्ति सुधियो नाडीगतिज्ञानिनः॥६४॥

अर्थ-प्रथम पित्तगतिसें चले (अर्थात् प्रथम वातगति चलना चाहिये त्याग दे यह विपरीत क्रम दिखाया) फिर वातगति और फिर कफकी चले तथा अपने स्थानको छोड वारंवार अनेक प्रकारसें चक्र (चाक) चाकफेरीके सदृश भ्रमणकरे, कभी तीव्रवेगसें चले और कभी मोर-समान उत्तरोत्तर मंद पडजावे ऐसी नाडीको नाडीके ज्ञाता साध्य किंतु असाध्य कहतेहैं।

यात्युच्चा च स्थिरात्यन्ता या चेयं मांसवाहिनी ॥
या च सूक्ष्मा च वक्रा च तामसाध्यां विदुर्बुधाः ॥ ६५ ॥

अर्थ-जो नाडी अत्यंत ऊंची अत्यंत स्थिर, और जो मांसवाहिनी मांसाहारकरनेसें जैसी चले ऐसी चलने लगे और जो अत्यंत सूक्ष्म टेढीहो उसको वैद्यजन असाध्य कहतेहैं।

---

१ भीमत्वं दधतीं कदाचिदपि वा इति पाठांतरम्।

असाध्यनाडीकापरिहार

भारप्रवाहमूर्च्छाभयशोकप्रमुखकारणान्नाडी ॥
संमूर्च्छितापि गाढं पुनरपि सा जीवनं धत्ते ॥ ६६ ॥

अर्थ—अत्यंत बोझाके उठानेसैं, अथवा विषवेग धाराके वहनेसे, रुधिर देखनेके कारण जो मूर्छित हो गयाहो, राक्षसादि दर्शनकरके भयभीततासैं ध-नपुत्रादि नष्ट होनेके शोकसैं जो नाडी अत्यंत स्पन्दरहितभी होगईहो वो फि-रभी साध्यताको प्राप्त होतीहै कोई भावप्रवाह ऐसा पाठमानताहै सो असत्‌है।

पतितः सन्धितो भेदी नष्टशुक्रश्च यो नरः ॥
शाम्यते विस्मयस्तस्य न किञ्चिन्मृत्युकारणम् ॥ ६७ ॥

अर्थ—जो उच्चस्थानादिसैं गिराहो, हड्डी आदिके जोडनेसैं, अतिसार रोगवाला, जिसके यक्ष्मा आदि रोगके कारण अथवा रमणकरनेके कारण शुक्रक्षीण होगयाहो, ऐसे मनुष्योंको यदि नाडी अत्यंत क्षीणभी होगईहो त-थापि मृत्युका कारण नहीहै, अर्थात् असाध्यके विस्मयको दूरकरैहै ।

तथा भूताभिषङ्गेऽपि त्रिदोषवदुपस्थिता ॥ समाङ्गा वहते नाडी तथा च न क्रमंगता॥अपमृत्युर्न रोगाङ्गा नाडी तत्सन्निपातवत् ६८

अर्थ—एवं भूताभिषंग अर्थात् भूतप्रेतबाधामें यदि नाडी सन्निपातके स-दृश चले तथा यह नाडी वातपित्त कफ स्वभाव क्रमवालीहो किंतु वे क्रम न होय तो उस सन्निपातके सदृश नाडीसेंभी मृत्युका भय नहीहै ।

स्वस्थानहीने शोके च हिमाक्रान्ते च निर्गदाः ॥
भवन्ति निश्चला नाड्यो न किञ्चित्तत्र दूषणम् ॥ ६९ ॥

अर्थ—उच्चस्थानसैं शोक और हिम (बर्फ कोहल आदिकी शरदी)सैं यदि नाडी निश्चल होय फिरभी प्रकट होय इस्मे मृत्यु शंकाका भय नहीहै। इस श्लोकमें " निर्गदा " जो पदहै सो असंगतहै । क्यों कि निर्गदा नाडीभी निश्चला होतीहै ।

स्तोकं वातकफं दुष्टं पित्तं वहति दारुणम् ॥
पित्तस्थानं विजानीयाद्भेषजं तस्य कारयेत् ॥ ७० ॥

वातकफयुक्त और पित्त जिसमें प्रबल होय तो उस-
करना चाहिये, वो असाध्य नहींहै।
यावद्धमन्या नोपजायते ॥
सत्त्वेऽपि नासाध्यत्वमिति स्थितिः ॥ ७१ ॥
नाडी स्वस्थान कहिये अंगुष्ठमूलसैं च्युत न होय, ताव-
करे यह असाध्य नहींहै।
प्रसङ्गवश कालनिर्णय कहतेहैं
भूलता भुजगाकारा नाडी देहस्य संक्रमात् ॥
विशीर्णा क्षीणतां याति मासान्ते मरणं भवेत् ॥ ७२ ॥
नाडी कैंचुएके सदृश कृश और टेढी चले, कभी सर्पके समान
और तिरछी चले, तथा कभी अलक्ष और अति कृशता पूर्वक-
एवं कभी देह सूजन आदिसैं स्थूल होजावे और कभी कृशहो जा-
वह रोगी दूसरे महिनेमें मरे।
क्षणाद्गच्छति वेगेन शांततां लभते क्षणात् ॥
सप्ताहान्मरणं तस्य यद्यङ्गं शोथवर्जितः ॥ ७३ ॥
नाडी जल्दी चले कभी चलनेसैं रहि जावे और देहमें शोथ
तो उस प्राणीकी सातदिनमें मृत्यु होय।
निरीक्ष्या दक्षिणे पादे तदा चैषा विशेषतः ॥
मुखे नाडी वहेन्नित्यं ततस्तु दिनतुर्यकम् ॥ ७४ ॥
अर्थ—पुरुषके दहने पैरमें और स्त्रीके वामपैरमें यदि नाडी विशेष संचार-
तथा आदिमें नित्य नाडी चले तो वहरोगी चारादिन जीवे। आदिशब्द-
जगे तर्जनी ऊंगली जाननी।
हिमवद्विशदा नाडी ज्वरदाहेन तापिनाम् ॥
त्रिदोषस्पर्शभजता तदा मृत्युर्दिनत्रयात् ॥ ७५ ॥
अर्थ—सन्निपात ज्वर दाहसैं संतप्त रोगीकी नाडी यदि शीतल और नि-
होय तो वह रोगी तीन दिनमें मरे।

*तत्स्थचिन्हस्य सत्वेपीति पाठान्तरम्।

गतिन्तु भ्रमरस्येव वहेदेकदिनेन तु ॥

अर्थ—जिस प्राणीकी नाडी भ्रमरके सदृश गमन करे अर्थात् जैसें भौंरा कुछ दूर उडकर चला जाताहे ओर फिर उसीजगे आय जाय जाताहे इस प्रकार नाडी चलनेसें उसकी एकदिनमें मृत्यु होय ।

कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाङ्गुलौ ॥ ७६ ॥
मरणे डमरूकारा भवेदेकदिनेन तु ॥

अर्थ—मरणमें नाडी डमरूके आकार होतीहे, वो १ दिनमें मरे ।

दृश्यते चरणे नाडी करे नेवाधि दृश्यते ॥
मुखं विकसितं यस्य तं दूरात्परिवर्जयेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ—जिसके चरणमें नाडी प्रतीत होय और हाथमें न मालुमहो, तथा जिसका मुख खुलगयाहो उसे वैद्य त्यागदेय ।

वातपित्तकफाश्चापि त्रयो यस्यां समाश्रिताः ॥
कृच्छ्रसाध्यामसाध्यां वा प्राहुर्वैद्यविशारदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जिसकी नाडीमें वातपित्त ओर कफ ए तीनोंदोष होय उसरोगीको बुद्धिवान् वैद्य कृच्छ्रसाध्य अथवा असाध्य कहतेहे ।

शीघ्रा नाडी मलोपेता शीतला वाथ दृश्यते ॥
द्वितीयदिवसे मृत्युर्नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥७९॥

अर्थ—जिस रोगीकी नाडी बहुधा मलदूषित होकर शीघ्र चले,किंवा शीतल प्रतीतहो उस रोगीकी दूसरे दिन मृत्यु होय, इस प्रकार नाडीज्ञानपारंगत वैद्योंनें कहाहे ।

मुखे नाडी वहेत्तीव्रा कदाचिच्छीतला वहेत् ॥
आयाति पिच्छलस्वेदः सप्तरात्रं न जीवति ॥ ८० ॥

अर्थ—बाननाडी तीव्रगति, तथा कभी मन्द०, तथा अगमेंसें गाढा पसीना निकले तो वह रोगी सातरात्रि नहीं बचे ।

देहे शैत्यं मुखे श्वासो नाडी तीव्रा विदाहिनी ॥
मासार्द्धं जीवितं तस्य नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ८१ ॥

शीतलता, मुखसैं अत्यंत श्वास छोडे, तथा नाडी तीव्र उसका अर्धमास आयुष्यहै, ऐसैं नाडीज्ञाताओंने कहाहै।

नाडी यदा नास्ति मध्ये शैत्यं बहिः क्रमः ॥
मन्दा वहेन्नाडी त्रिरात्रं नैव जीवति ॥ ८२ ॥

वातनाडी चले नहीं अंतर्गत शीतहो तथा बाहर ग्ला- नाडी चले तो वह रोगी तीनरात्रि नहीं जीवे।

अतिसूक्ष्मातिवेगा च शीतला च भवेद्यदि ॥
तदा वैद्यो विजानीयात्स रोगी त्वायुषः क्षयी॥ ८३ ॥

कालमें नाडी अति सूक्ष्म किंवा अतिवेगवान् और शीतल रोगी क्षीण आयुहै ऐसैं वैद्य जाने।

विद्युद्द्रोगिणां नाडी दृश्यते न च दृश्यते ॥
अकालविद्युत्पातेव स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ८४ ॥

रोगीकी नाडी कभी कभी विजलीके समान फडकजावे औ- अस्तहो जावे, वो रोगी अकस्मात् जैसैं विजली गिरतीहै, इसप्रकार यमराजके घर जाय।

तिर्यगुष्णा च या नाडी सर्पगा वेगवत्तरा ॥
कफपूरितकंठस्य जीवितं तस्य दुर्लभम् ॥ ८५ ॥

उष्ण वक्रगति तथा सर्पके समान बहुत वेगवानहो, तथा कं- ठ कफसे भरजावे ऐसा रोगीका जीवन दुर्लभ जानना।

चला चलितवेगा च नासिकाधारसंयुता ॥
शीतला दृश्यते या च याममध्येन मृत्युदा॥ ८६ ॥

नाडी कांपनेवाली तथा चंचल नासिकाके श्वासोच्छ्वास चलनेवाली और शीतल ऐसी प्रतीतहो वो रोगी एकप्रहरमें ऐसा जानना।

शीघ्रा नाडी मलोपेता मध्याह्नेऽग्निसमो ज्वरः ॥
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीयेऽह्नि म्रियेत सः ॥ ८७॥

अर्थ–जिस रोगीकी त्रिदोषयुक्त नाडी बहुतजल्दी चले, तथा मध्यान्हमें अग्निके समान ज्वर आवे, उस रोगीकी आयु एकदिनकीहै दिन मृत्यु होय ।

स्कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाङ्गुलौ ॥
मध्ये द्वादशयामानां मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

अर्थ–जो नाडी अपने मूलस्थानमें फडके नही और ऊंगलियोंका स्पर्श करे उसकी बारह प्रहरमें मृत्यु होय, ऐसा जानना ।

स्थित्वा नाडी मुखे यस्य विद्युद्द्योतिरिवेक्षते ॥
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीये म्रियते ध्रुवम् ॥ ८९ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी मूलस्थानके अग्रभागमें ठहरकर बिजलीके सदृश तडफजावे वह एकदिन जीवे, दूसरे दिन निश्चय मरे ।

स्वस्थानविच्युता नाडी यदा वहति वा न वा ॥
ज्वाला च हृदये तीव्रा तथा ज्वालावधि स्थितिः ॥ ९० ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी अपने स्थानसें विच्युतहो (छूट) कर कभी चले कभी नहीं चले और हृदयमें तीव्र दाह होय तो जबतक हृदयमें ज्वालाहे तावत्काल रोगीका जीवन है ।

अङ्गुष्ठमूलतो बाह्ये द्व्यंगुले यदि नाडिका ॥
प्रहरार्द्धाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९१ ॥

अर्थ–अंगुष्ठमूल अर्थात् तर्जनी उंगली धरनेके स्थलमें यदि नाडीकी गति प्रतीत नहो, केवल मध्यमा और अनामिका इन दो अंगुलीसें प्रतीतहोय तो उस रोगीकी अर्ध प्रहरके उपरांत मृत्यु होय ।

सार्द्धद्वयाङ्गुलाद्बाह्ये यदि तिष्ठति नाडिका ॥
प्रहरैकाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९२ ॥

अर्थ–नाडी मूलस्थानमें २॥ अंगुल अंतर अर्थात् यदि केवल काके शेपार्द्ध मात्रमें फडके उसकी प्रहरउपरांत अर्थात् दूसरे प्रहरमें

नाडी चञ्चला यदि गच्छति ॥
दिवसैस्तस्य मृत्युरेव न संशयः ॥ ९३ ॥

नाडी तर्जनीके सर्वांश और मध्यमा ऊंगलीके चतुर्थांशमें होवे और मध्यमाके अवशिष्ट पादत्रय और अनामिकाके होय तो उस रोगीकी तीनदिनमें मृत्यु होय।

पादाङ्गुल्गता नाडी कोष्णा वेगवती भवेत् ॥
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९४ ॥

पूर्ववत् तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्यापकहो चले और किंचिन्मात्र गरम प्रतीत होय तो उसरोगीकी चार मृत्यु होय।

पादांगुलगता नाडी मन्दमन्दा यदा भवेत् ॥
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९५ ॥

पूर्ववत् समग्र तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्याप्तहो चले तो उसरोगीकी पांचवे दिन मृत्युहोय।

नाडीद्वारा आयुका ज्ञान

वामनाडी दीर्घरेखा बाहुमूले च स्पन्दते ॥
जीवेत्पञ्चशतं वर्षं नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥

रोगीकी वामनाडी दीर्घरेखाके आकारसे भुजाकी जडमें त- १०५ वर्ष जीवे इसमें संदेह नहीं।

दीर्घाकारा वामनाडी कर्णमूले च स्पन्दते ॥
जीवेत्पञ्चशतं सार्द्धं धनिको धार्मिको भवेत् ॥ ९७ ॥

वामनाडी आकारमें लंबी होकर कानकी जडमें प्रतीत सार्धपंचशतवर्ष जीवे और धनिक तथा धार्मिक होय।

वामनाडी स्वल्परेखा हनुमूले च स्पन्दते ॥
पञ्चवर्षाधिकञ्चैव जीवनं नात्र संशयः ॥ ९८ ॥

वामनाडी स्वल्परेखामें हो ठोडीकी जडमें तडफे वो पांचवर्ष जीवे इसमें संदेह नहीं।

नाडीद्वारा भोजनका ज्ञान

पुष्टिस्तैलगुडाहारे मांसे च लगुडाकृतिः ॥ क्षीरे च स्तिमिता वेगा मधुरे भेकवद्गतिः ॥ ९९ ॥ रम्भागुडवटाहारे रूक्षशुष्कादिभोजने ॥ वातपित्तार्त्तिरूपेण नाडी वहति निष्क्रमम् ॥ १०० ॥

अर्थ–तैल और गुडके खानेसें नाडी पुष्ट प्रतीत होतीहै, मांसके नाडी लकडीके आकार चलतीहै, दूध पीनेसें मंदगतिसें चलतीहै। मधुर हारसें नाडी मेंडकके समान चलतीहै। केला, गुड, वडा, रूक्षवस्तु, और शुष्क द्रव्यादि भोजनसें जैसी वातपित्तरोगमें नाडी चलतीहै उसप्रमाण चलेहै।

अथ रसज्ञानम्

मधुरे बर्हिगमना तिक्ते स्यात्स्थूलतागतिः ॥ अम्ले कोष्णात्प्लवगतिः कटुके भृंगसन्निभा ॥ १०१ ॥ कषाये कठिना म्लाना लवणे सरला द्रुता ॥ एवं द्वित्रिचतुर्योगे नानाधर्मवती धरा ॥ १०२ ॥

अर्थ–मिष्ट पदार्थ भक्षणसें नाडी मोरकीसी चाल चलतीहै कडुई द्रव्य भक्षणसें स्थूलगति, खट्टे पदार्थ खानेसें कुछ उष्ण और मेंडकाकी गति होतीहै, चरपरी द्रव्य खानेसें भौंराके आकार गति होतीहै, कसेली द्रव्य खानेसें नाडी कठोर और म्लान होतीहै, निमकीन पदार्थ खानेसें सरल (सीधी) और जल्दी चलनेवाली होतीहै, इसीप्रकार भिन्न भिन्न रसके एकही समय सेवन करनेसें नाडी अनेकप्रकारकी गतिवाली होतीहै।

अम्लैश्च मधुराम्लैश्च नाडी शीता विशेषतः ॥ चिपिटैर्भृष्टद्रव्यैश्च स्थिरा मन्दतरा भवेत् ॥ १०३ ॥ कूष्माण्डमूलकैश्चैव मन्दमन्दा च नाडिका ॥ शाकैश्च कदलैश्चैव रक्तपूर्णेव नाडिका ॥ १०४ ॥

अर्थ–खट्टे पदार्थ अथवा मधुराम्ल (मिष्ट और खट्टामिला) नाडी शीतल होतीहै, चिरवा और भुनीहुई (चना, वोहरी) द्रव्य

---

१ तिक्ते स्यात्स्थूलता । २ कषाये कठिनाम्ला वा इति वा पाठः ।

और मंदगति चलतीहै, पेठा मूली अथवा कंदपदार्थके भ-
चलतीहै शाक (पत्रपुष्पादिकका) और केलेकी फली
रक पूर्णके सदृश चलैहै।

नाडी दुग्धे शीता बलीयसी ॥ गुडैः क्षीरैश्च
स्थिरा मन्दवहा भवेत् ॥ १०५ ॥ द्रवेऽतिकठिना
कठिनापि च ॥ द्रवद्रव्यस्य काठिन्ये कोमला
च ॥ १०६ ॥

भक्षणसैं नाडी मंदगामिनी होतीहै, दूधके पीनेसैं नाडी शीतल
दूध और और पिष्टपदार्थ (चूनके, पिट्ठी आदिके
नाडी चंचलतारहित मंदगामिनी होतीहै, द्रवपदार्थ (कढी,
) भोजनसैं नाडी कठिन होतीहै और कठोर (लड्डू,
) सैं नाडी कोमलहोतीहै यदि द्रवपदार्थ कुछ कठोर होयतो
और कठोर उभय स्वभाववती होतीहै।

उपवासाद्भवेत्क्षीणा तथा च द्रुतवाहिनी ॥
उपवासाद्भवेत्क्षीणा ज्ञेया द्रुतगतिस्तथा॥ १०७॥
संभोगान्नाडिका क्षीणा ज्ञेया द्रुतगतिस्तथा॥ १०७॥

संभोगान्नाडिका क्षीणा और शीघ्रवाहिनी होतीहै एवं
(निराहार) सैं नाडी क्षीण और शीघ्रवाहिनी होतीहै एवं
नाडी क्षीण और शीघ्र चलनेवाली होतीहै।

कुपथ्यवसनाडीकी चाल

विषमावेगा ज्वरिणां दधिभोजनात् ॥ १०८ ॥

ज्वरवान् पुरुष दही खाय तो उसकी नाडी गरम और वि-
होतीहै।

श्रीमाथुरकृष्णलालात्मजदत्तरामेण सङ्कलिते नाडीदर्पणे द्वितीयावलोकः ॥ २ ॥

इसके उपरांत कितनेक रोगोंकी नाडीकी जैसी अवस्था हो-
तिहुवेहै, वहां रोग निरूपणमें व्याख्या करके प्रथम ज्वर
करतेहैं।

ज्वरके पूर्वरूपमें

अङ्गग्रहेण नाडीनां जायन्ते मंथराः प्लवाः ॥
प्लवः प्रबलतां याति ज्वरदाहाभिभूतये ॥१॥
सान्निपातिकरूपेण भवन्ति सर्ववेदनाः ॥

अर्थ–ज्वर आनेवाली अवस्थाके कितनेक क्षण पहिले अंगमें पीडा ने लगे, नाडी मंथर (मंद) भावसें मेंडकाकी चाल चलने लगे तथा ज्वरकी पूर्वावस्थाके वा धारामें वहनेवाले मेंडकाके समान तथा सां... क ज्वरकी पूर्व अवस्थाके प्रमाण नाना आकृतिसें गमन करे।

ज्वरके रूपमें

ज्वरकोपेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ २ ॥

अर्थ–जिस कालमें इसप्राणीको ज्वर चढआताहै उस समय नाडी गरम और वेगवती होती होतीहै।

उष्मा पित्तादृते नास्ति ज्वरो नास्त्युष्मणा विना ॥
उष्णा वेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ॥ ३ ॥

अर्थ–विना पित्तके गरमी नहीं और विनागरमीके ज्वर नहीं होता अत एव ज्वरके वेगमें नाडी गरम और वेगवान् होतीहै।

ज्वरे च वक्रा धावन्ती तथा च मारुतः प्लवे ॥
रमणान्ते निशि प्रातस्तथा दीपशिखा यथा ॥ ४ ॥

अर्थ–ज्वरके कोपमें और वादीमें नाडी टेढी और दौडती चलतीहै, तथा मैथुनकरनेके पिछाडी रात्रिमें और प्रातःकालमें नाडी दीपशिखाके समान मंद गमन करतीहै।

वातज्वरे

सौम्या सूक्ष्मा स्थिरा मन्दा नाडी सहजवातजा ॥
स्थूला च कठिना शीघ्रा स्पन्दते तीव्रमारुते ॥५॥
वक्रा च चपला शीतस्पर्शा वातज्वरे भवेत् ॥

वायुके द्वारा नाडी कोमल, सूक्ष्म, स्थिर, और मंद वेग-
तीव्रवायु द्वारा नाडीस्थूल, कठिन, तथा जल्दी चलनेवाली
वातज्वरमें टेढी, चपल तथा शीतल स्पर्शवान् नाडी होतीहै ।

च सरला दीर्घा शीघ्रा पित्तज्वरे भवेत् ॥
नाड्याः काठिन्याच्चलते तथा ॥ ६ ॥

नाडी शीघ्र चलनेवाली, सरल, दीर्घ, और कठिनताके
फडकनेवाली होतीहै ।

नाडी तन्तुसमा मन्दा शीतला श्लेष्मदोषजा ॥
मलाजीर्णे नातितरां स्पन्दनं च प्रकीर्त्तितम् ॥ ७ ॥

प्रकोपमें नाडी तंतुवत् सूक्ष्म, मंद वेगवाली, और शीतल
और मलाजीर्णमें अत्यंत नहीं फडकती ।

द्वंद्वजनाडी

चञ्चला तरला स्थूला कठिना वातपित्तजा ॥ ईषच्च
दृश्यते तूष्णा मन्दा स्याच्छ्लेष्मवातजा ॥ ८ ॥ निरं-
तरं खरं रूक्षं मन्दश्लेष्मातिवातलम् ॥ रूक्षवाते भवे-
त्तस्य नाडी स्यात्पित्तसन्निभा ॥ ९ ॥ सूक्ष्मा शीता
स्थिरा नाडी पित्तश्लेष्मसमुद्भवा ॥ १० ॥

नाडी चञ्चल, तरल, स्थूल, और कठोर होतीहै । वातक
कुछ गरम और मंदगामिनी होतीहै । जिस नाडीमें किंचिन्मात्र
और अधिक वात होतीहै वह अत्यंत खर और रूक्ष होतीहै । जिसके
वायूका अत्यंत कोप होय उसकी पित्तके सदृश अर्थात् अत्यंत वक्र
अत्यंत स्थूल होय, पित्तकफ ज्वरमें नाडी सूक्ष्म शीतल, और मन्दवे-
होतीहै ।

१ मंदास्य सुस्थिरा शीता पिच्छला श्लेष्मिणोमनेत् इति पाठांतरम् । २ वक्रा च कठिना वातपित्तजा इति पाठान्तरं ।

रुधिरकोपजानाडी

मध्ये करे वदेन्नाडी यदि सन्तापिता ध्रुवम् ॥
तदा नूनं मनुष्यस्य रुधिरापूरितामलाः॥११॥

अर्थ–मध्य करमें अर्थात् मध्यमांगुली निवेशस्थलमें नाडी ...
कर तडफे तो जानेकि वातादि दोषत्रय रक्तप्रकोपकरके परिपूर्णहै ।
र्थात् रुधिरसैं दूषितहैं ।

आगन्तुकरूपभेदमाह

भूतज्वरे सेक इवातिवेगात् धावन्ति नाड्यो हि यथाब्धिगाभाः ॥

अर्थ–भूतज्वरमें नाडी अत्यंत वेगसैं चलतीहै, जैसैं समुद्रमें
नदियोंका प्रवाह वेगसैं चलताहै ।

तथा

एकाहिकेन क्वचन प्रदूरे क्षणान्तगामा विषमज्वरेण ॥ १२ ॥
द्वितीयके वाथ तृतीयतुर्य्यैं गच्छन्ति तप्ता भ्रमिवत् क्रमेण॥

अर्थ–एकाहिकज्वरमें नाडी सरलमार्गको त्यागकर क्षणक्षणमें
मिनी होतीहै तथा द्वितीय, तृतीय (तिजारि) और चातुर्थनामक विषम-
ज्वरमें उष्ण होकर इतस्ततो धावमाना होतीहै ।

अन्यत्रापि

उष्णवेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ॥ उद्वेगक्रोधकामेषु भय
चिन्ताश्रमेषु च ॥ भवेत् क्षीणगतिर्नाडी ज्ञातव्या वैद्यसत्तमैः१

अर्थ–गरम और वेगवान् नाडी ज्वरके कोपमें होतीहै उद्वेग, क्रोध,
मबाधा, भय, चिन्ता, और श्रम इनमें नाडी क्षीणगतिवाली होतीहै
मंद मंद गमन करतीहै ।

श्रमज्ञानमाह

व्यायामे भ्रमणे चैव चिन्तायां श्रमशोकतः ॥
नाना प्रभावगमना शिरा गच्छति विज्वरे ॥ १५ ॥

(दंडकसरत) करनेसैं, डोलनेसैं, चिंता, श्रम, और शो-
मनुष्यकी नाडी अनेकप्रभावसैं गमन करती है।

अजीर्णरूपमाह

भवेन्नाडी कठिना परितो जडा ॥
च द्रुता शुद्धा त्वरिता च प्रवर्तते ॥ १६ ॥

और पकाजीर्ण दोनोंमें नाडी कठोर और दोनोंपार्श्वोंमें
इसीप्रकार कभी निर्मल निर्दोष तथा शीघ्रवेगवती होतीहै।

तत्र विशेषमाह

पकाजीर्णे पुष्टिहीना मन्दं मन्दं वहेज्जडा ॥
असृक्पूर्णा भवेत् कोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी ॥ १७ ॥

नाडी पुष्टतारहित मंद मंद चलतीहै तथा भारीहोतीहै।
परिपूर्णनाडी गरम, भारी होतीहै और आमवातकी नाडी
होतीहै।

लघ्वी भवति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती मता ॥
मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत् ॥
मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी हंसाकृतिस्तथा ॥ १८ ॥
मग्नेऽग्नौ क्षीणतां याति नाडी हंसाकृतिस्तथा ॥ १८ ॥

अर्थ—दीप्ताग्निवाले मनुष्यकी नाडी हलकी और वेगवती होतीहै, मंदा-
और क्षीणधातुकपुरुषकी नाडी मंदतर होतीहै, इसीप्रकार जिस
जठराग्नि सर्वथा मंदहोगईहो उसकी नाडी हंसके समान अतिशय-
।

आमाश्रमे पुष्टिविवर्धनेन भवन्ति नाड्यो भुजगाग्रमानाः।
आहारमांद्यादुपवासतो वा तथैव नाड्योऽग्रभुजाभिवृत्ताः ॥१९॥

अर्थ—आम, और परिश्रम न करनेसें तथा देहमें अत्यंत पुष्टता होनेसें
सर्पके अग्रभागके सदृश होतीहै इसीप्रकार थोडा भोजन करनेसैं या उ-
करनेसैं नाडी भुजाकेअग्रभागमें सर्पके अग्रभाग समान होतीहै।

ग्रहणीरोगे

पादे च हंसगमना करे मंडूकसंप्लुवा ।
तस्याग्नेर्मन्दता देहे त्वथवा ग्रहणीगदे ॥ २० ॥

अर्थ–जिसकी पेरकी नाडी हंसके समान ओर हाथकी नाडी मेंडकाके समान चले उसके देहमें मंदाग्निहै अथवा संग्रहणी रोगहै ऐसा जानना ।

भेदेन शान्ता ग्रहणागदेन निर्वीर्यरूपा त्वतिसारभेदे ।
विलम्बिकायां प्लवगा कदाचिदामातिसारे पृथुता जडा च॥२१

अर्थ–संग्रहणीका दस्तहोनेके उपरात नाडी शातवेगा होतीहै अतिसार रोगका दस्त होनके उपरात नाडी सर्वथा बलहीन होजातीहै विलंबिकारोगमें नाडी मेंडकाके तुल्य चलतीहै इसीप्रकार आमातिसारमें नाडी स्थूल और जडवत् होतीहै ।

विषूचिकाज्ञानम्

निरोधे मूत्रशकृतोर्विड्ग्रहे त्वितराश्रिताः ।
विषूचिकाभिभूते च भवन्ति भेकवत्क्रमाः ॥ २२ ॥

अर्थ–केवल मल या केवल मूत्र अथवा मलमूत्र दोनों एक साथ बंद होजावे वा इच्छापूर्वक इनके वेगको रोकनेसें एवं विषूचिका रोगमें नाडीकी गति मेंडकाकी चालके समान होतीहै ।

आनाहमूत्रकृच्छ्र

आनाहे मूत्रकृच्छ्रे च भवेन्नाडीगरिष्टता ।

अर्थ–अनाह (अफरा) आर मूत्रकृच्छ्र रोगमें नाडी गुरुतर अर्थात् भारी होतीहै ।

शूलरोगे

वातेन शूलेन मरुत्प्लवेन सदैव वक्रा हि शिरा वहन्ती ।
ज्वालामयोपित्तविचेष्टितेन साध्या न शूलेन च पुष्टिरूपा ॥ २३ ॥

अर्थ–वायुगुल्ममें आर वायुके प्रवरता निरंधनमें नाडी सदैव अत्यंत टेढी चलतीहै । पित्तके शूलमें वह अतिशय गरम होतीहै । और आमशूलमें पुष्टियुक्त होतीहै ।

प्रमेहज्ञानम्

प्रमेहे ग्रन्थिरूपा सा सुतप्ता त्वामदूषणे।
रोगमें नाडी ग्रंथि अर्थात् गांठके आकार प्रतीत होयहै औ-
नाडी सर्वकालमें उष्ण होतीहै।

विषविष्टम्भगुल्मज्ञानं

। विषरिष्टकायां विष्टम्भगुल्मेन च वक्ररूपा ॥
अधः स्फुरन्ती उत्तानभेदिन्यसमाप्तकाले ॥२४॥
वा सर्पादि दंशजन्य अरिष्टलक्षण प्रकाशित होनसें त-
नाडी देखनेसें बोधहोयहै कि इसके यह रोग नवीन उत्पन्न होताहै
तथा गुल्म रोगमें विषके तुल्य और विशेषता यह होतीहै कि
वक्ररूप होतीहै। इन दोनों पीडामें अत्यंत वायुका प्रको-
नाडी अधःफुरित होय, एवं इनकी असंपूर्णावस्थामें अर्थात् पूर्वरू-
नाडी अत्यंत ऊर्ध्व गतिहोय।

गुल्मे विशेषमाह

कम्पाथ पराक्रमेण पारावतस्येव गतिं करोति ॥ २५ ॥
कंपितहो बलपूर्वक खबूतरकी तुल्य गमन करती

अथ भगन्दरज्ञानम्

कठिने देहे प्रयाति पैत्तिकं क्रमम्॥ भगन्दरानुरूपेण ना-
प्रयाति वातिकं रूपं नाडीपावकरूपिणी २
॥२६॥प्रयाति वातिकं रूपं नाडीपावकरूपिणी
अर्थ—व्रणरोगकी अपक्वअवस्थामें नाडीकी गति पैत्तिक नाडीके तु
। भगंदर तथा नाडीव्रण रोगमें नाडीकी गति वातनाडीके तुल्य अ
उष्ण होतीहै।

वान्तादिज्ञानम्

वान्तस्य शल्याभिहतस्य जन्तोर्वेगावरोधाकुलितस्य भूयः॥
गतिं विधत्ते धमनी गजेन्द्रमरालमानेव कफोल्वणेन ॥ स्त्री-
रोगादिकमपि रक्तादिज्ञानक्रमेण ज्ञातव्यम् ॥ २८ ॥

अर्थ—वमित (जिसने रद्द करीहो) शल्याभिहत (जिसके किसी कारका बाण आदि शल्य लगाहो) और वेगरोधी (जिसने मल मूत्रको रण कर रक्खाहो) ऐसे प्राणियोंकी नाडी तथा कफोल्वणा नाडी और हंसादिककी गतिके समान चलतीहै। इसीप्रकार रक्तादि ज्ञानकरके अनुक्त जो स्त्रीके रोग प्रदरादिक उनकोभी वैद्य अपनी बुद्धि मानीसें जानलेवे यह नाडीपरीक्षा शंकरसेनके मतानुसार लिखीहै।

नाडीस्पन्दनसंख्या।

पष्ट्यास्पन्दास्तु मात्राभिः षट्पञ्चाशद्भवन्ति हि ॥
शिशोः सद्यः प्रसूतस्य पञ्चाशत्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥
चत्वारिंशत्ततः स्पन्दाः षट्त्रिंशद्यौवने ततः ॥ प्रौढ-
स्यैकोनत्रिंशत्स्युर्वार्धकेऽष्टौ च विंशतिः ॥ ३० ॥

अर्थ—अब नाडीके फडकनेकी संख्या कहतेहैं, जैसें कि ६० दीर्घ अक्षर उच्चारण करनेमें जितना काल लगताहै उतने समयमें अर्थात् १ पलमें तत्काल हुए बालकी नाडीकी स्पंदनसंख्या ५६ वार होतीहै। इसके उपरान्त अवस्था बढनेके अनुसार ५० तथा ४० वार होतीहै। यौवन अवस्था अर्थात् जवानीमें ३६ वार होतीहै। और प्रौढ अवस्थामें २९ वार, और बुढापेमें २८ वार, एकपलमें नाडी फडकतीहै।

पुंसोऽतिस्थविरस्य स्युरेकत्रिंशदतः परम् ॥ योषितां पुरुषाणाञ्च स्पन्दास्तुल्याः प्रकीर्तिताः ॥ ३१ ॥ प्रौढानां रमणीनान्तु द्व्यधिकाः सम्मता बुधैः ॥ ३२ ॥

अर्थ—अति वृद्धहोनेमें नाडीकी संख्या फिर बढने लगतीहै, अर्थात् एकपलमें ३१ वार तडपतीहै। यह अवस्था भेद करके संपूर्ण स्पन्दन संख्या लिखी गईहै। यह संख्या स्त्री और पुरुष दोनोंमें समान कहीहै। परंतु केवल प्रौढावस्थामें स्त्रीकी नाडी संख्या पुरुष संख्याकी अपेक्षा अधिक अधिक अर्थात् प्रौढ पुरुषकी स्पन्दनसंख्या प्रतिपलमें २९ वार होतीहै। और प्रौढा स्त्रीकी संख्या ३१ वार होतीहै।

प्राणः षडात्मकैः ॥
स्यात्तु तत् षष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते ॥ ३३ ॥
उच्चारण करनेमें जितना समय लगताहै उसको एक
निमेष कहतेहैं। १० मात्राका १ प्राण ६ प्राणका १ पल
१ दंड होताहै। अत एव एक पलका साठ भाग उसमें एक भाग
कहतेहै उसीको मात्रा कहतेहैं।

मतान्तरेण

देहिनां देहे वयोवस्थाविशेषतः ॥
यथा नाड्यस्तत्संख्यानामिहोच्यते ॥ ३४ ॥
मतान्तरसैं कहतेहै-कि स्वस्थ पुरुषोंके देहमें आयुकी अव-
जैसैं नाडी चलतीहै उनकी संख्या इसग्रंथमें लिखतेहै।
सार्धद्वयपलः कालो यावद्गच्छति जन्मतः ॥
तावत्प्रकम्पते नाडी चत्वारिंशच्छताधिकम्॥ ३५ ॥
जन्मलेनेसैं यावत् २॥ पल व्यतीत नहीं हो उतने सम-
१४० वार नाडी वारंवार कंपन होतीहै।
तदूर्ध्वं हायनं यावत्सार्द्धद्वयपलेन सा ॥
मुहुः प्रकम्पमाधत्ते त्रिंशद्वारं शतोत्तरम् ॥ ३६ ॥
१ वर्षकी अवस्थापर्यंत बालककी नाडी २॥ पलमें १३० वार
।
उपरिष्टादाद्वितीयात्तावत्काले शरीरिणः ॥
ततः प्रकम्पते नाडी दशाधिकशतं मुहुः॥ ३७ ॥
अर्थ—वर्ष दिनसैं लेकर जबतक यह बालक दो वर्षका होताहै तावत्का-
नाडी ढाई पलमें ११० वार वारंवार तडफतीहै।
ततस्त्रिवत्सरं व्याप्य देहिनां धमनी पुनः ॥
मुहुः प्रकम्पते तद्वत्सार्द्धद्वयपले शतम् ॥ ३८ ॥
अर्थ—फिर दो वर्षसैं उपरांत तीन वर्ष तकके बालककी नाडी २॥ पलमें
१०० वार वारंवार तडफतीहै।

ततस्त्वा सप्तमाद्वर्षान्नवतिः स्यात्प्रवेपनम् ॥
धमन्यास्तन्मिते काले प्रत्यक्षादनुभूयते ॥ ३९ ॥

अर्थ–फिर तीन वर्षसें सात वर्षतकके बालककी नाडी २॥ पलमें ९ वार वारंवार चलतीहै ।

ततश्चतुर्दशं तावत्पञ्चाशीतिः प्रवेपनम् ॥ त्रिंशद्वर्षमभिव्याप्य ततोऽशीतिः प्रकीर्त्तितम् ॥ शतार्द्धवत्सरं व्याप्य कंपनं पञ्चसप्ततिः ॥ ततोऽशीतौ प्रकथितं षष्टिवारं प्रवेपनम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–फिर सात वर्षसें लेकर चौदह वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीकी नाडी २॥पलमें ८५ वार तडफतीहै। और चौदह वर्षकी अवस्थासें लेकर ३० वर्षकी अवस्थापर्यंत ढाई पलमें ८० वार तडफतीहै। तीस वर्षके उपरांत पंचास वर्ष पर्यंत ७५ वार कंपन होताहै। और पंचास वर्षसें लेकर अस्सी वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीको नाडी२॥ पलमें६०वार कंप होतीहै।

वयोऽवस्थाक्रमेणैवं क्षीयन्ते गतयो मुहुः ॥
सार्द्धद्वयपले काले नाडीनामुत्तरोत्तरम् ॥ ४१ ॥

अर्थ–फिर जैसे जैसे अवस्था क्षीण होती जातीहै उसी प्रकार नाडीका गमनभी २॥ पलमें क्षीण होता जाताहै ।

एवं बहुविधाद्रोगात्तत्तल्लिङ्गानुबोधनी ॥
नाडीनां च गतिस्तद्वद्भवेत्कालात्पृथक् पृथक् ॥ ४३ ॥

अर्थ–इस प्रकार अनेकविध रोगोंमें उन्ही उन्ही लिङ्गोंकी बोधन करनेवाली नाडियोंकी गति पृथक् पृथक् कालमें पृथक् पृथक् होतीहै ।

हृदयस्य वृहद्भागः संकोचं प्राप्यते यदि ॥
प्रसारयेत्तदा नाडी वायुना रक्तवाहिनी ॥ ४४ ॥

अर्थ–जिस समय हृदयका वृहद्भाग संकुचित होताहै और खुलताहै उससमय रक्तवाहिनी नाडियोंकी गति पवनके वेगसें प्रस्पन्दन होतीहै ।

भवेन्मलविभेदतः॥
।च तादृशी॥ ४५॥
निकलनेसैं नाडीकी गति अत्यंत क्षीण होतीहै। उसीप्रका-
अल्परुधिरसैं और दुर्बलतासैंभी नाडी अतिक्षीण होतीहै।

देहे व्याघातैर्गतिभेदतः॥
चञ्चला च दुर्बला क्षीणधीरकैः॥ ४६॥
संपूर्ण रक्तवाहिनी नाडी आघात करके और अपनी गतिके
रुधिरको तर्पण करेहै अर्थात् सर्वत्र फैलातीहै। उनकी गति भेद
सैं तेजपुञ्जा, चञ्चला, क्षीणदा, दुर्बला, और धीरगामिनी, ये
पांच प्रकारकी गतिहै।

चञ्चलाओरतेजःपुञ्जागति

रक्तोष्णे शीघ्रगा नाडी ज्वरे च चञ्चला भवेत्॥
तथा वाते तेजःपुञ्जा गतिः शिरा॥ ४७॥
रुधिरके कोपमें गरमीमें नाडी शीघ्र चलतीहै, उसीप्रकार
चंचला नाडी होतीहैं और ज्वरके आरंभमें तथा वातके रोगमें नाडी
गति होतीहै।

दुर्बला और क्षीणनाडी

दुर्बले ज्वररोगे च अतिसारे प्रवाहिके॥
दुर्बला क्षीणदा नाडी प्रबला प्राणघातिका॥ ४८॥
दुर्बलतामें ज्वरमें अतिसार और प्रवाहिकारोगमें नाडीकी दुर्बला
होतीहै, क्षीणदा नाडी प्रबल प्राणोंकी नाशक होतीहै।
बहुकालगता रोगाः सा नाडी धीरगामिनी॥
बहुतदिनोंसैं रोगहोवे उसकी नाडी धीरगामिनी होतीहै।

सुखीपुरुषकीनाडी

हंसगा चैव या नाडी तथैव गजगामिनी॥
सुखं प्रशस्तं च भवेत्तस्यारोग्यं भवेत्सदा॥ ४९॥
अर्थ—जिसप्राणीकी नाडी हंसकीसी अथवा हाथीकीसी चाल चले उस-
सुखहोय और सदैव आरोग्यरहे।

सुव्यक्तता निर्मलत्वं स्वस्थानस्थितिरेव च ॥
अमन्दत्वमचाञ्चल्यं सर्वासां शुभलक्षणम् ॥ ५० ॥

अर्थ—उत्तम प्रकारसैं प्रतीतहो निर्मल अपने स्थानमें स्थिति, और चांचल्यता रहितहो ये संपूर्ण नाडीयोंके शुभ लक्षण जाननें।

दोषसाम्याच्च सादृश्यादनुक्तासु रुजास्वपि ॥
ज्ञातव्या धमनीधर्मो युक्तिभिश्चानुमानतः ॥ ५१ ॥

अर्थ—यह कितनेएक रोगोंमें नाडीकी प्रकृति लिखीहै, इस्सें भिन्न समस्त रोगोंमें जैसी जैसी नाडीयोंकी गति होतीहै उसको वैद्य अनुमान और युक्तिद्वारा जाने, अर्थात् जिस रोगकी जिस जिस रोगको साथ सादृश्यताहै अथवा जिसकिसी रोगमें संपूर्ण कुपितदोषोंके साथ अन्य किसीरोगके कुपित दोषोंकी साम्यता मिले उन उन रोग समस्तोंमें नाडीकी एकविध गती होतीहै ऐसा जानना।

नाडीदर्शनानंतरहस्तप्रक्षालन

नाडीं दृष्ट्वा तु यो वैद्यो हस्तप्रक्षालनं चरेत् ॥
रोगहानिर्भवेच्छीघ्रं गंगास्नानफलं लभेत्॥५२॥

अर्थ—जो वैद्य रोगीकी नाडीदेखकर हाथको जलसैं धोताहै, तो जिस रोगीकी नाडी देखी उसका रोग शीघ्र नष्टहोय, और वैद्यको गंगास्नानका फल प्राप्तहोय।

तथाच

यो रोगिणः करं स्पृष्ट्वा स्वकरं क्षालयेद्यदि ॥
रोगास्तस्य विनश्यन्ति पङ्कः प्रक्षालनाद्यथा॥ ५३ ॥

अर्थ—जो वैद्य रोगीकी नाडी देख अपने हाथको धोताहै इसकर्ममैं धोनेसे कीच जाताहै इसप्रकार उसरोगीका रोग दूर होताहै।

इति श्रीमाठकज्ञातीय माधुकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण निर्मिते आयुर्वेदोद्धारे पंदुरत्नान्तर्गते नाडीदर्पणे आयुर्वेदोक्तनाडीपरीक्षावर्णननामचतुर्दशस्तरङ्गः ॥ १४ ॥

यूनानीमतानुसारनाडीपरीक्षामाह

नब्जं यूनानिवैद्यके मतः ॥
तत्क्रमं चात्र वैद्यानां कौतुकाय च ॥ १ ॥

वैद्य नाडीको नब्ज कहते हे उस नब्जका क्रम अर्थात् नमें वैद्योंके कौतुकनिमित्त लिखताहूं।

चैव नफसानी रूहद्वयमुदाहृतम् ॥
शिरःस्थं च देही देहसुखावहम् ॥ २ ॥

दो प्रकारकीहे एक हयवानो दूसरी नफसानो रूह। हयवानी और नफसानो मस्तकमें रहतीहे। ए दोनो देहधारियोंकी है।

तत्संगतास्तु या नाड्यः शुरियानसवः क्रमात् ॥
हृत्पद्मे यास्तु संलग्नाः समन्तात्प्रस्फुरन्ति ताः ॥ ३ ॥

रूहके साथ लगीहुई जो नाडीहे वो दो हे एक शुरियान् दू- इनमें शुरियान् नाडी हृत्पद्ममें लगरहीहे उससे सर्वत्र स्फुरण होताहे

शिरोन्तर्भागसम्बद्धास्ताभिश्चेष्टादिकं भवेत् ॥
श्रेष्ठो जीवनिवासोऽहृद्राज्ञो राज्यासनं यथा ॥ ४ ॥

अर्थ–और दूसरी असव नामक जो नाडीहै, वह शिरोन्तरभाग मस्तकके भीतर लगरहीहै, इन नाडियोंकरके इसदेहकी चेष्टादि होतीहै जैसें राजा राजसिंहासनपर स्थितहो शोभित होताहै । उसीप्रकार श्रेष्ठनिवास हृदय स्थानहै ।

तद्भवाधमनी मुख्या मनुष्यमणिबन्धगा ॥
परीक्षणीया भिषजा ह्यंगुलीभिश्चतसृभिः॥ ५ ॥

अर्थ–उन हृद्गतनाडियोंमें मनुष्यके पहुचेकी धमनी नाडी मुख्यहै।उसको वैद्य चार उंगली रखकर परीक्षा करे। अपने शास्त्रमें तीन उंगलीसें परीक्षा करना लिखाहै परंतु यूनानी वैद्य चार दोषोंको चार उंगलियोंसें देखना कहतेहैं।

यथैणगतिपर्यायस्तद्वदुत्प्लुत्य गच्छति ॥
गिजाली गतिराख्याता पित्तकोपविकारतः ॥ ६ ॥

अर्थ–जैसें मृगका बच्चा उछलता कूदता चलताहै इसप्रकार नाडीकी गतिको गिजाली कहतेहै। यह पित्त कोप विकारको सूचित करतीहै ।

तरङ्गनाम मोज स्यात् मोजीगतिरितीरिता ॥
निवेदयति वर्प्मस्थं वायोरुष्माणमेव सा ॥ ७ ॥

अर्थ–यूनानी जलकी लहरको मोज कहतेहै उस मोज सदृश नाडीकी गतीको मोजी गति कहतेहै यह देहस्थ पवनकी गरमीको जाहिर करतीहै।

दूदस्यात्क्रिमिपर्यायो दूदी तस्य गतिः स्मृता ॥
श्लेष्माणसंचयं चामं प्रकटीकुरुते हि सा ॥ ८ ॥

अर्थ–दूद (कानसलाई आदि) कृमिका पर्यायहै अतएव तद्विशिष्ट नाडीकी गतिको दूदी गति कहतेहैं। यह कफके संचयको और प्रकाशित करतीहै ।

दमल्पिपीलिकामोर दमन्दी तद्गतिः स्मृता ॥
यस्य नाडी तथा गच्छेन्मृतिं तस्याशु निर्दिशेत् ॥ ९ ॥

चैंटी (कीडी) और मोरका नामहै अतएव इन्होकीसी
गति कहतेहैं। जिस पुरुषकी नाडी ऐसी अर्थात् मोर चैंटी
जल्दी मृत्युको प्राप्तहो।
पर्यायो मिन्शार इति कीर्त्तितः॥
ः काष्ठे मिन्शारी सा गतिर्भवेत् ॥ १० ॥
धमनी धत्ते बाह्यान्तःशोथरोगिणः॥
पर्याय यूनानीमें मिन्शार है वो जैसे लकडीके ऊपर च-
नाडीके गमन करनेको मिन्शारी गति कहतेहैं। इसप्रका-
बाहरभीतर सोथ रोगीकी चलतीहै।
गतिर्मूषकपुच्छवत् ॥ ११ ॥
धमन्याः सम्भवोत्किल ॥
नाडीकी गति मूषक (चूहे) की पुच्छसदृशहो अर्थात् एक
और दूसरी तरफ क्रमसें पतलीहो उसको जनूवलफार गति
यह पित्तकफके कोपमें होतीहै।
नाडी शलाकासदृशी सूक्ष्मा धीरा बलात्ययात् ॥ १२ ॥
मत्याघातद्वयं यस्यामधस्तादङ्गुलेर्भवेत् ॥
जुलफिकरत्तत्स्मृता पित्तश्लेष्मदग्धप्रबोधिनी ॥ १३ ॥
नाडी सलाईके आकार अत्यंत सूक्ष्म और धीरगामिनी होय
कहातीहै यह बलनाश होनेतें होतीहै और जो नाडी मध्यमा-
दोवार आघातकरे वह पित्तकफ दग्धको बोधन करतीहै इसको जु-
कहतेहैं।
मुत्तंइद प्रस्फुरन्ती या गतिः कोष्ठस्य रूक्षताम् ॥
विद्ग्रहत्वं च सौदावी विचारान् ज्ञापयत्यपि ॥ १४ ॥
अर्थ—जिस नाडीके प्रस्फुरणसें कोठोको रूक्षता प्रगटहोवे उसको मुत्तं-
और इसीसें मलबंधका ज्ञान होताहै यह सौदावी (वादीकी)
विचारसें आने।
र्नित्या कम्पपर्यायस्ताद्विशिष्टा तु या भवेत् ॥
मुर्वदयुनाम सा ज्ञेया लकराणांधाविकारयुक् ॥ १५ ॥

अर्थ–कंपको फारसीमें इर्तिशा कहतेहैं उसके समान जो नाडी सको मुर्त्तइस नाडी कहतेहैं यह सफरा (पित्त) और सौदा दोनोंके श्रितावस्थामें होतीहै ।

मुम्तिला पूर्ति तूद्दिष्टाऽसृजोस्यां मुम्तिली तु सा ॥
तमः कफादधोगा या मुन्खफिज् सा प्रकीर्त्तिता ॥ १६ ॥

अर्थ–परिपूर्णको फारसीमें मुम्तिला कहतेहै, अतएव जिस नाडीसें धिरकी परिपूर्णता प्रतीतहो उस नाडीकी गतिको मुम्तिली कहतेहै नाडी तमोगुण या कफसें अधोभागमें गमनकरे उसको मुन्खफिज् नाडी कहतेहैं।

उर्ध्वमुत्प्लुत्य या गच्छेत्किंचिन्मायुप्रकोपतः ॥
शाहक्बुलन्द सा ख्याता धमनी संपरीक्षकैः ॥ १७ ॥

अर्थ–जो नाडी पित्तके प्रकोपसें उछलकर ऊपरको गमनकरे उसको नाडीके ज्ञाता वैद्य शाहकबुलंद नाडी कहतेहै ।

चतुरङ्गुलिसंस्थानादपि दीर्घा तवीलसा ॥
दराज इति पर्यायस्तस्या एव निपातितः ॥ १८ ॥

अर्थ–जो नाडी चार अंगुलसें भी अधिक लंबीहो उसको तवील ऐसा कहतेहै और उसी नाडीका नामान्तर दराज है ।

परिमाणान्न्यूनरूपा सा कसीर समीरिता ॥
अमीक निम्नगा या च अरीज आयता स्मृता ॥ १९ ॥

अर्थ–जितना नाडीका परिमाण कहाहै यदि उससें न्यूनहो उसको कसीर कहतेहैं और अधोगामिनी नाडीको अमीक कहतेहै और लंबी नाडीको अरीज कहाहै ।

यथा गतिस्तु दोषाणां धत्ते भ्रान्त्यल्पहीनते ॥
गलवे कसूर अग्लात तारतम्येन निर्दिशेत् ॥ २० ॥

अर्थ–दोषोंके यथागति अनुसार नाडीको बली और निर्बली जानना बली निर्बली आदिनाडियोंको गलबे कसूर और आग्लातके तारतम्यसें कहे

वातिकृत्वरनिर्दोषा स्वस्थस्य परिकीर्तिता ॥
इति संक्षेपतो नाडीपरीक्षा कथिता बुधैः ॥ २१ ॥

मया प्रोक्तो भाषायां जनहेतवे ॥

प्राणीकी निर्दोष नाडीको वाकियुल्वस्त कहतेहै यह मैने सं-
२ नाडीपरीक्षा कहीहै इसका विस्तार मेने भाषामें कहाहै

यूनानी मतानुसारनाडीकोष्टकम्

	१	४	५	६	७	८	९	१०
	दूदी	मिन्शारी	जनबल फार	नुमली	मतली	मतरकी	जुलफेकारव	वाकअफि स्वस्त
	कृमि	आरा	मूसेकी पूछ	शेरचेंटी	सलाई	हथोडा	शोकाक्रांत समान	विषम टंकोरदेना
जो नाडी जलकी तरंगके समान गमनकरे उसको तरीको सूचित करतीहै । अथवा देहकी निर्बलताको सूचित करे है ।	जो नाडी कीडाके समान मंद मंद गमनकरे वो कफ, और आम दोषको सूचित करतीहै । इस नाडीकी गतिको दूदी कहतेहै ।	जैसे लकडीके ऊपर आरा चलता इसप्रकार खरदराट लिये जो नाडी उंगलियोंका स्पर्शकरे वो बाहर और भीतर सूजनको सूचित करतीहै । इस गतिको मिन्शारी गति कहतेहै ।	जो नाडी चूहेकी पूंछसदृश गमन करे उसको जनबुल्फार गति कहतेहैं । यह कफपित्तके कोपमें होती है ।	जो नाडी चैंटी और मोरकी गतिके समान गमन करे उसको नुमली गति कहतेहै । ऐसी नाडी रोगीकी शीघ्र मृत्यु सूचना करतीहै ।	जो नाडी सलाईके समान दोनो प्रांतोमें पतली और बीचमें मोटी होकर गमन करे उसको मतलीगति कहतेहै । यह निर्बलता सूचना करती है ।	जो नाडी हथोडेके समान उंगलियोंको वारंवार चोट देवे उसको मतरकी गति कहतेहै । यह अंगत गरमीकी सूचना करतीहै ।	जो नाडी गमन करते २ ठहर जावे उसको जुलफिकारगति कहतेहै । यह दिलकी कमजोरी सूचित करतीहै प्राय यह शोक समय होतीहै ।	जिस नाडीका टंकोरदेना जिस वख्तमें देनाउचितहै उसी पूर्वही जास्ती टंकोर देदेवै यह श्वासाधिक्य निर्बलतामें होतीहै ।

यूनानी भाषामें नाडीको नब्ज कहनेका यह कारणहै कि नब्जका अर्थ तडफना है वह प्रत्येक मनुष्यकी प्रकृति, देश, काल, अवस्थाओंके समान नहीं होतीं, कुछ नकुछ भेद रहताहीहै वैद्य जिस स्वस्थमनुष्यकी अनेकवार होगी देखी यदि फिर उसकी रोगावस्थामें देखेगा तो उसको नाडीका ज्ञान यथार्थ होगा, अन्यथा ज्ञान होना अति दुस्तर है । नाडीदेखनेवालेको वा दिखानेवालेको उचितहै कि किसीवस्तुका

हाथको सहारा न देवे, न कोई वस्तु पकड रक्खीहो, तथा रोगीके पट्टीआदि बंधनादिक न होवे, यद्यपि बहुतसे वैद्य पहुचे, कनपटी, टकने आदि अनेक स्थानकी नाडी देखतेहै, परंतु बहुथा हाथकी ... यह कारणहै कि अन्यनाडी सब थोडी थोडी प्रगटहै शेष हाड मांसमें होनेके कारण अस्त होरहीहै उसजगे उंगलीयोंको स्पर्श प्रतीत नही ... परंतु हाथकी नाडी विशदहै अतएव इसपर उंगली उत्तमरीतिसें धरी जातीहै परंतु मुख्य कारण इसका यहहै कि किसी स्त्रीकी नाडी देखनेकी आवश्यकता होवे तो वो अन्यान्य अङ्गोकी नाडी लज्जाके वस नहीं दिखा सकती, परंतु हाथके दिखानेमें किसीकोभी संकोच नहीं होता अतएव सर्वत्र हाथकी नाडी देखना प्रसिद्धहै ।

अब कहतेहैकि यूनानी वैद्य नाडीकी गति दो प्रकारकी वर्णन करतेहै । प्रथम इम्बिसात दूसरी इन्किबाज ।

इम्बिसात (बाह्यगति)	इन्किबाज (अभ्यंतरगति)
इम्बिसात उसगतिको कहतेहै जब नाडी बाहर आनकर ऊंगलीयों का स्पर्श करती है ।	इन्किबाज उसगतिको कहतेहै कि जब नाडी ऊंगलियोंका स्पर्शकर भीतरको प्रवेश करतीहै ।

अब जानना चाहिये कि हिकमतमें दोष चार प्रकारके कहे है यथा ।

दोषः खिल्त इति प्रोक्तः स चतुर्धा निरूप्यते ॥
सौदा सफरा तथा बल्गम् तुरीयं खून उच्यते ॥ २२ ॥

यूनानीमें दोष शब्दको खिल्त कहतेहै वह चार प्रकारहै जैसे सौदा (वात) सफरा (पित्त) बल्गम् (कफ) और चौथा दोष खून (रुधिर) है परंतु अपने शास्त्रके दूष्यहोनेसें इसको दोष नहीं माना यह शारीरकमें लिख आएहै ।

प्रत्येकदोषमें दोदोगुणहै यथा

तत्र सौदा धरातत्वं रूक्षं शीतं स्वभावतः ॥ पित्तमग्नेः स्वरूपन्तु सफरा रूक्षमुष्णकम् ॥ २३ ॥ बल्गमवारिस्वरूपं स्यात्सकफः स्निग्धशीतलः ॥ अस्रं वायुः खून इति स्निग्धोष्णं तेषु तद्वरम् ॥ २४ ॥

तहां सौदा अर्थात् वातमें पृथ्वीतत्व अधिकहै अत एव वातस्वभावमेंही

पित्तमें अग्नितत्व विशेषहै अत एव सफरा (पित्त)
बल्गम (कफ) में जलतत्व अधिक होनेसैं स्निग्ध शी-
खून (रुधिर) में वायुतत्व अधिक होनेसैं स्निग्ध और उ-
अन्य दोषोंकी अपेक्षा यह रुधिर श्रेष्ठहै ।

दोषोंके गुणोंका विचारकर उक्त नाडीके लक्षणोंसैं मिलाकर अपनी बुद्धिसैं कल्पना करे ।

जो नाडी दीर्घ और स्थूलहो उसको गरमतर गुणविशिष्ट होनेसैं
और जो नाडी दीर्घ तथा पतली होवे उसमें गरम और
होनेसैं पित्तकी जाननी जो ह्रस्व और मोटीहो वुह शरद और तर होनेसैं कफकी जाननी और जो नाडी ह्रस्व और पतली होवे और खुष्क गुणहोनेसैं वातकी नाडी जाननी चाहिये ।

इम्बसातके भेद

(दीर्घाकार)		अरीज (स्थूलाकार)			उमक़ (बहिर्गत्याकार)		
कसीर ह्रस्व २	तवील १ दीर्घ	अरीज स्थूल	ज़ैयक वा ज़ीक (कृश)	मुअ़तदिल समान	मुशरिफ़ उमक़ बहिर्गत	मुन्ख़फ़िज़ अंतर्गत	मुअ़तदिल समान
और चार अंगुलसैं न्यून होवे तो वो सरदीके लक्षण वाली जाननी अर्थात् ऐसी पुरुषके सरदी जानना ।	जो नाडी पहुचेसैं भुजाके प्रति चार अंगुलसे अधिक लंबी प्रतीतहो वो गरमीके लक्षण वाली जाननी ।	यदि नाडी तर्जनी उंगलीसैं लेकर कनिष्ठिका पर्यंत स्थूल प्रतीत होवे तो तर अर्थात् जैसे रुधिर और कफमें ।	जो नाडी पतली प्रतीतहोवे उसको रूक्ष अर्थात् खुष्क कहतेहै । जैसे पित्त और वात प्रकोपमें होतीहै ।	जो नाडी न स्थूलहो न कृशहोवे किंतु समानहो उसमें तरी ठी-कठीक होतीहै ।	जो नाडी अत्यंत उछलकर बलपूर्वक उंगलियोंको स्पर्शकरे उसमें गर-मीकी अधिकता प्रतीत होतीहै ।	जो नाडी इसमें कमउंची उठे अर्थात् धीरे उंगलियोंको स्पर्शकरे उसमें गर्मीकी न्यूनता प्रतीत होतीहै । किंतु सरदीको द्योतन करतीहै ।	जो नाडी न बहुत उभरी हुईहो न बहुत बिलकुल दबी हुई हो किंतु समानहो इसमें गरमी ठीक होतीहै ।

अन्यचक्र

अंक	विषय			
१	नाडीका चञ्चलत	सबल	शीघ्रगामिनी	जो नाडी [illegible] कि शरीरमें ऐसी [illegible] उछले तो हृदयकी प्रबलता जाने ।
		दुर्बल	मन्दगामी	और [illegible] नाडी [illegible] तो हृदयकी दुर्बलता जाननी ।
		मोतदिल	समता	और जो नाडी न बहुत [illegible] न अत्यन्त धीरे चले वो दिलकी समताको प्रगट करतीहै ।
२	नाडीका विस्तहोना	सरी	ममता	जो नाडी [illegible] समताकर [illegible] शरीरकी [illegible] द्योतन करतीहै ।
		तरी	मन्दगामी	और [illegible] ममताकर [illegible] शरीरकी अधिकता द्योतन करतीहै ।
		मुअदिल	ताम्रगामी	[illegible] समान करे वा नाडी [illegible] समानता प्रगट करतीहै ।
३	आकृति	मृदु	नरम	जो नाडी [illegible] उसको [illegible] कहतेहैं, इसे फारसीमें [illegible] कहतेहैं ।
		कठिण	मजबूत	और जो [illegible] न रहे [illegible] उसको फारसीमें [illegible] कहते हैं ।
		सम	मोअदिल	[illegible] न बहुत [illegible] न बहुत नर्म वो मोतदिल जाननी ।
४	प्रमाण	रुधिरपूर्ण	मुमतिला	[illegible] और [illegible] हुई जानना अथवा [illegible] जानना ।
		स्वल्परुधिर	खाली	और जो [illegible] होजाइ वो [illegible] होजाइ उसमें थोडा रुधिर और [illegible] जानना ।
		समता	मोदिल	और जो नाडी न [illegible] न [illegible] हो [illegible] । इससे [illegible] ठीक होताहै ।
५	स्पर्श	उष्ण	गरम	[illegible] गरमी जानना ।
		शीत	सरद	और [illegible] सर्दीका आधिक्यता जाने ।
		सम	मोअदिल	[illegible] उसको सम कहतेहैं ।
६	साध्यासाध्य	पूर्वसदृश	उस्तवा	जो नाडी [illegible] आवे वो [illegible] ।
		विपरीत	इख्तिलाफ	जो [illegible] चले वो असाध्यहै ।
		समता	मोअदिल	जो [illegible] उसको साध्य जानना ।
७	स्थिति	अस्था	मुखतलिफ	[illegible] नाडी [illegible] जो निर्बल जाननी ।
		धैर्य	मुनफारार	जो नाडी [illegible] उसको बलवान् कहतेहैं ।
		समता	मोदिल	और जो [illegible] उसको [illegible] जाननी ।

प्रत्येक प्रस्तार के नौ नौ भेद होतेहैं लंबाव चौडाव और गहराई इन तीनोंके प्रमाणको हकीम लोग कुतर कहतेहैं ।

एकत्र करो अर्थात् प्रस्तार करो तो दोमस्तार२७
है जैसें आगेके दोनों चक्रोमें लिखे हैं दोनों प्रस्तार
है कि तीनप्रकारके लंबावको तीन प्रकारोंकी चौडाईके
नो होवेंगे, इसीप्रकार लंबाई और गहराइयोंको तथा चौ-
तीन तीन प्रकारोंके साथ मिलानेसें नो नो भेद होते हैं
सत्ताइस सत्ताइस भेद होते है इसका उदाहरण आगे च-
इस गुणनको फारसीवाले सनाई कहते है।

नाडीनां प्रस्तारचक्रम्

(द्विगुण)

	ह स	ह क	ह य	य स	य क	य य
ह य	ह व	ह अं	ह य	य व	य अं	य थ
स व	क व	क अं	क य	य व	य अं	य य

सलासी (त्रिगुण)

द स व	द स अं	द म य	द क व	द क अं	द क य	द य व	द य अं	द य य
ह स व	ह स अं	ह स य	ह क व	ह क अं	ह क य	ह य व	ह य अं	ह य य
य स व	य स अं	य स य	य क व	य क अं	य क य	य य व	य य अं	य य य

दोनों चक्रोमें जो अक्षर है उनमें द सें दीर्घ, ह सें न्हस्व, और य सें
समान जानना। उसीप्रकार स सें स्थूल, क सें कृश, व सें व-
सें अंतरगतकी समस्या जानलेनी चाहिये।

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे नाडीदर्पणे यूनानीमतानुसारं नाडीपरीक्षणं तरंगः

PULSE EXAMIN.

अथैंग्लंडीयमतेन नाडीपरीक्षा

नाडी पल्सेति शब्दिता॥ तस्याः परोक्षापरो-
द्विविधा मतिः॥ १॥ अङ्गुल्यङ्गुलिसंस्पर्शी परीक्षा न क-
ता॥ करोति या साऽपरोक्षाङ्गुलिस्पर्शेन पश्यतः॥ २॥

अर्थ—इंग्लंड अर्थात् अंगरेजीमें नाडीको पल्स Pulse कहते है वह दो प्रकारकी हे एक परोक्ष और दूसरी अपरोक्ष तहां जो नाडी देखनेवालेकी ऊंगलियोंका स्पर्श न करे वह परोक्ष कहाती हे और जो उंगलियोंका स्पर्श करे वो अपरोक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष नाडी कहाती है ।

उत्थानापेक्षया पुंस आसने तदपेक्षया ॥ शयने नाडिकावेगो मन्दी भवति नानृतम् ॥ ३ ॥ सायंतनाद्धि समयात्प्रातःकालेऽधिका गतेः ॥ वेगसंख्या भवेन्निद्राकाले ऱ्हासं च गच्छति ॥ ४ ॥

अर्थ—खडे होनेकी अपेक्षा (वनिसवत) बेठनमें और बेठनेकी अपेक्षा सोंनेमें नाडीकी गति घटजाती हे । उसीप्रकार सायंकालकी अपेक्षा प्रातःकालमें नाडीकी गति बढजाती हे । और निद्रामें नाडीकी संख्या घटजाती है ।

भोजनस्याथ समये वेगसंख्या विवर्द्धते॥अहिफेनसुरादीनामुष्णानां यदि भोजनम् ॥ ५ ॥ बुभुक्षावसरे नाडीगतेर्वेगो ऱ्हसत्यलम् ॥ एषा नाडी गतेर्वेगचर्या सामान्यतो मता ॥ ६ ॥

अर्थ—यदि अफीम मद्य आदि गरमवस्तु खाय तो उस गरम भोजनके कारण नाडीकी संख्या बढजाती है, और अत्यंत शीतलवस्तू खानेसें नाडीकी संख्या न्यून हो जाती है, यह अर्थांशसें जाना जाता है । उसीप्रकार भोजनके समय नाडीका वेग मंद होजाताहे, यह नाडीकी सामान्य गति संख्या कहीहै ।

नाडीकी व्यवस्था जाननेके लिये वैद्यको प्रथम इतनी वस्तुओंका जानना अति आवश्यक हे । जेसे प्रथम नाडी देखनेकी विधि दूसरे आरोग्यावस्थाकी नाडी, तीसरे रोगावस्थाकी नाडी और चतुर्थ नाडी देखनेका यंत्र ।

१ नाडीदेखनेकी विधि—नाडी देखनेके जो नियम वैद्योंनें निश्चित कर रक्खे हे, यदि उनके अनुसार न देखी जावे तो हम जानते हे कि नाडीका यथार्थ ज्ञान होना अति असंभव हे । अतएव अब उन नियमोंको वर्णन करते हैं ।

प्रथम—वैद्य या रोगी कहींसें चलकर आया हो तो उचित हे कि थोडीदेर विश्राम लेकर फिर नाडी देखे या दिखावे, तथा परिश्रमकी

समयभी नाडी न देखे ऐसे समयकी नाडी विश्वास

बिठलाकर या लिटाकर यदि कोई आवश्यकता होय तो रेडिअल् आर्टेरी Radial Artery (जो पहुचेमें अंगुठेकी भीतर है) उसपर बराबर तीन उंगली रखकर नाडी देखना, पहुचेकी देखना असंभव होय तो अन्यान्य स्थानकी देखे, जैसें रोगमें कनपटीकी नाडी, तथा गठियामें पहुचेपर पट्टी बंधीहो हाथ कटगए हो तो प्रगंड (बाजू) की नाडी देखे, और कभी नीचे भीतरकी तरफ पोस्टीरिअर टीबीअल Posteriar नाडीको देखते हैं।

—वैद्यको रोगीके दोनों हाथोंकी नाडी देखनी चाहिये, इसका यह कि ऐसा देखा गया है, कि एक ओरकी नाडी दूसरी नाडीसें बडी। और यहभी स्मरण रखना कि दहने हाथकी वामहाथसें और हाथकी दहने हाथसें नाडी देखे इसमें सरलता रहती है।

नाडी दहने हाथकी अपेक्षा वामहाथकी उत्तमरीतिसें वि- है इस्सें प्रतीत होता है कि स्त्रियोंकी बाए हाथकी नाडी कुछ ब- है। हिंदुस्थानी वैद्य जो स्त्रीके वामकरकी नाडी देखते हैं कदाचि- यही कारण न होय।

स्पन्दन संख्या अर्थात् शीघ्रगति और मंदगति जान- पश्चात् उसके बलाबल जाननेको कुछ दबाकर फिर ढीली छोडदेवे, यह प्रतीत होजावे कि नाडी दबानेसे कितनी दबती है। परन्तु इतनी दबावे कि जिस्से रुधिरका भ्रमण बन्द हो जावे, केवल इतनी दाबे कि नाडीकी तडफ प्रतीत होती रहे।

छटे—धैर्यरहित पुरुषोंकी या अत्यंत डरपोककी नाडी देखै तो उनका बार्तालापमें लगाय लेवे, इसका यह कारण है कि ऐसे मनुष्योंके तु-

च्छकारणसें हृदयकी खटक न्यून हो जाती है । अतएव नाडीका वृत्तान्त ठीक ठीक निश्चय नहीं होता ।

अब कहते है कि रुदन करनेसें और मचलनेसें वालकोंके पहुचेकी नाडीका देखना कठिन है । इसवास्ते उनको गोदीमें वैठाल खिलौने आदिका लोभ देके उनके छातीपर कान लगाकर हृदयकी धडधडाटका निश्चय करना । यदि नाडीकाही देखना जरूरी होवे तो निद्रा अवस्थामें देखनी चाहिये ।

सातमे—नाडी देखनेके समय यहभी अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि नाडीपर किसी प्रकारका दवाव नहो जैसें बंध अथवा तंगी, या रसोली, वा घोटू आदिका सहारा नहोवे । क्षणिक और मानसिक रोगोंमें अनेकवार नाडी देखनी चाहिये कि जिस्से रोग भलेप्रकार समझमें आयजावे ।

आरोग्यावस्थाकी नाडी

मध्यम श्रेणीके युवापुरुषोंकी नाडी आरोग्यावस्थामें साथ प्रबंधके कुछ दबनेवाली और कुछ भरीहुई होतीहै।परंतु चिन्ह भेद और अवस्था तथा स्वभावादि भेदसें नाडीमें अंतर,होजाताहै, और बालिकाओंकी नाडी पुरुषोंकी अपेक्षा कुछ छोटी होतीहै । और शीघ्रचारिणी होतीहै।दंभी प्रकृतिवालोंकी नाडी भरीहुई कठोर, और शीघ्रगामिनी होतीहै । कोमल स्वभाववाले मनुष्योंकी नाडी धीरे धीरे चलेहै, और नम्र होतीहै । वृद्धावस्थामें कठोर होतीहै ।

नाडीकी स्पन्दनसंख्या (जिनका निश्चय करना नाडीकी और अवस्थाओंसे सुगमहै) सदैव हत्पदके संकुचित खटकेके समान होतीहै । इस्सें कदापि अधिक नही होती, परंतु अपस्मारआदि चित्तके रोग और मूर्च्छा आदिमें एक दो गति न्यून हो जातीहै ।

छोटे बालककी नाडीकी गति अधिक होतीहै, फिर जैसें जैसें अवस्थाकी वृद्धि होतीहै उसी प्रकार क्रमसें नाडीकी स्पन्दन संख्या न्यून होती जातीहै । परंतु वृद्धावस्थामें फिर कुछ बढतीहै ।

अवस्थानुसारनाडीकीगति

गतिप्रमाण	अवस्था
१४०	सद्यःप्रसूत बालककी
सैं १३० तक	दूधपीनेवाले बालककी
१००	५ वर्षसैं ६ वर्ष तकके बालककी
९०	१५ वर्षतकवाले नवयुवावस्थामें
सैं ७५	३५ वर्षतक अर्थात् युवावस्थामें
७०	३५ वर्षसैं लेकर ५० वर्ष वालोकी अर्थात् वृद्धावस्थामें
७५ „ ८० तक	अतिवृद्धावस्थामें

इस चक्रमें जो नाडीकी संख्या है वह आरोग्य पुरुषके लिये ठीकहै। परंतु रोगावस्थामें न्यूनाधिक होजातीहै। यदि नैरोग्य पुरुषकी नाडीकी गति १ मिन्टमें ७२ वार हो और स्त्रीकी ८२ वार होय तो ठीक जाननी, स्त्रीकी १० गति पुरुषसैं सदैव अधिक होतीहै। और गर्मी, सूजन, ज्वर, अतिदुर्बलता, जागना, फ्थोरा-के प्रथमदर्जासे लाल् रुधिर. क्रोध, जोस आदिमें ७० या अस्सीसैं १०० १२० वरंच २०० तक नाडीकी गति संख्या प्रत्येक मिंटमें हो एवं शरदी आलस्य, निद्रा, कुछथकावट, क्षुधामें, हवाके दबावमें, इत्यादि कारणोंसैं नाडीकी गति ऐसी न्यून होजातीहै कि प्र-मिनटमें ६०, या ३५ तकही रहजाती है।

रोगावस्थाकी नाडी

रोगावस्थामें नाडीकी गति संख्या और अन्य अन्य लक्षणोंमें विशेष अंतर होताहै जैसे आगे लिखतेहै।

ज्वर, प्रदर, वमन, विरेचन, बुहरान्, इत्यादि रोगोंमें नाडी इतनी शीघ्र चलतीहै कि गणना करना कठिन होजाताहै यदि ज्वरावस्थामें अकस्मात् मंदपडजावे तथा उसके साथ अन्य अशुभ लक्षणोंकी आधिक्यता तो उसप्राणीके मस्तकमें किसीप्रकारके विघ्नसैं सक्ता या पक्षाघात हो-रोगीके मरनेका भय रहताहै।

गति संख्याके सिवाय नाडीमें वृत्तान्त निश्चय होताहै, उसको आगे कहतेहै।

नाडीकीइंगरेजीसंज्ञा

आनन्दादितरावस्थास्वानंदापेक्षया गतेः ॥
वेगसंख्या वर्द्धते सा नाडी फ्रीकैंटशब्दिता ॥ १ ॥

अर्थ–आनंदकी अपेक्षा जिस नाडीकी संख्या अधिक वेगवान् हो उसकी इंग्रेजीमें Frequent फ्रीकैंट कहतेहै ।

आनन्दादितरावस्थास्वानन्दापेक्षया गतेः ॥
वेगसंख्या न्हसति सा नाडीन्फ्रीकैंटशब्दिता ॥ २ ॥

अर्थ–जिस नाडीमें, आनन्दकी अपेक्षा स्पन्दन संख्या न्यून होय उसमंदचारिणी नाडीको इंग्रेजीमें Infrequent इन्फ्रीकैंट कहतेहै ।

चिरकालधृतायां च नाड्यां संख्या न वर्द्धते ॥
न वा न्हसति वेगस्य सा च रैग्यूलराभिधा ॥ ३ ॥

अर्थ–जिस नाडीपर बहुतदेरीतक हाथधरनेपरभी कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीत न होय उस नाडीको इंग्रेजीमें Regular रैग्यूलर कहतेहै ।

चिरकालधृतायाञ्च नाड्यां संख्या विवर्द्धते ॥
मन्दी भवति चावस्था सेरैग्यूलरशब्दिता ॥ ४ ॥

अर्थ–जो नाडी-बहुतदेरी हाथरखनेसें कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीतहोय उस अवस्थाको डाक्टरलोग Irregular इररैग्यूलर कहतेहै ।

सकृदङ्गुलिसंस्पर्शादन्तर्धानन्तु गच्छति ॥
इन्टरमिटेंटाभिधा साऽसृक्कफाशयदूषिणी ॥ ५ ॥

अर्थ–जो नाडी एकबार उँगलियोंका स्पर्शकर छिपजावे, वह रुधिर और कफाशयको दूषितकर्ता हृदयसंबंधी व्याधिको उत्पन्नकरे इसको इंगलंडीय वैद्य Intermittent इन्टरमिटेंट कहतेहै ॥

यदा रक्तेन पूर्णत्वमापन्ना नाडिका भवेत् ॥
तदा फुल् शब्दविख्याताथवा लार्जेति विश्रुता ॥ ६ ॥

अर्थ–जिस समय नाडी रुधिरसें परिपूर्ण होतीहै उसको डाक्टरलोग फुल् या Full Large लार्ज ऐसा कहतेहै ।

यस्यां हृत्कमलोच्छ्वासाद्रक्तमल्पं वहेत्तु सा ॥
रिक्तानाडी स्मॉलसंज्ञा समाख्याताङ्ग्लभाषया ॥ ७ ॥
समय हृदयसैं रुधिर अल्प प्रगटहोय उस रिक्तनाडीको पाश्चिमात्य
Egual स्माल ऐसा कहतेहै ।
या वै गुणवदातन्वी नाडी क्षीणत्वशंसिनी ॥
रक्ताऽक्ततां द्योतयन्ती सा थ्रेडीपल्ससंज्ञिता ॥ ८ ॥
अर्थ—जो नाडी डोरेके माफिक बहुतबारीक प्रतीत होय वह क्षीणता
रक्तकी अल्पताको प्रकाश करनेवालीको Thready Pulse
कहतेहै ॥
अंगुलीभिर्यदा नाडी पीडितापि न नम्रताम् ॥
व्रजेत्तदातिरूक्षत्वद्योतिनी हार्डशब्दिता ॥ ९ ॥
नाडी उँगलियोंके पीडनसैंभी अर्थात् दाबनेसैंभी नम्र नहोवे
द्योतनकरता नाडीको डाक्टरजन Hard हार्ड ऐसा कहतेहै।
अंगुलीभिर्यदा नाडी पीडिता नम्रतां व्रजेत् ॥
सार्द्रत्वद्योतिनी मृद्वी सॉफ्टशब्देन शब्दिता ॥ १० ॥
नाडी उंगलियोंके दवानेसैं दबजावे उस मृदुनाडीको साफ्ट
कहतेहै यह आर्द्रत्वको द्योतन करतीहै ।
प्रतिस्पन्दं शीघ्रतायां संख्या यस्या न वर्धते ॥
सकृच्छ्रैघ्र्यधरा तूर्णगा नाडी क्वीक् शब्दिता ॥ ११ ॥
नाडीमेंकी प्रत्येक तडफ शीघ्रभी होय परंतु स्पन्दन संख्या
किंतु एकवारही जल्दीकरे उस तूर्णनाडीको नाडीको इंग्लैंडीय वैद्य
क्वीक् ऐसा कहतेहै यह निर्बलताको द्योतन करतीहै ।
यस्या मन्दगतिर्या च नाडी पूर्णा भवेत्तु सा ॥
स्लोशब्दशब्दिता ज्ञेया रक्तकोपप्रकाशिनी ॥ १२ ॥
अर्थ—जो नाडी मंदगतिहो और परिपूर्ण वह रुधिरकोपके प्रकाश क-
नाडीको इंग्लैंडीय वैद्य Slow स्लो कहते है ।

खूनकी गतिके कारण नाडीके अनेक भेद है जैसें आर्योटा Poorta Water Hamr वाटरहेमर Bounding बौंडिंग Lavauering लेवरिंग ThrilingPulse थ्रिलिंग् पल्स Redoubled रिडवल्ड Dicrratores या डाईक्टोर्स और इसीटेटआदिहै । जो लहरके समान उंगलियोंको लगकर हटजावे उसको जर्किंग अर्थात् झटकेदार नाडी कहते हैं। किवारोंकी रिगडके माफिक आर्योटा होती है । उछलनेवाली नाडीको बौंडिंग् कहते हैं, जो नाडी काँपती हो उसको थ्रिलिंगपल्स कहते हे। इसीप्रकार अन्यसब नाडियोंकी गतिको बुद्धिवान् डाक्टरद्वारा और उनके ग्रंथोंसें जाननी इसजगे ग्रंथविस्तारके भयसें नहीं लिखी।

नाडीदर्शक यंत्र

नाडी देखनेके लिये अंग्रेजी डाक्टरोंनें एक यंत्र निर्माण करा है उसको अंग्रेजी बोलीमें स्फिग्मोग्राफ Sphygmograph कहते हैं । इसमें अनेक टुकडे होते हैं विना दृष्टिगोचर उनका समझना मुसकिल् है इसलिये उस यंत्रकी तसवीर जो इस नाडीदर्पणग्रंथके पिछाडी उस्सें समझना उसके आवश्यक विभागोंका कुछ इसजगे वर्णन करते है ।

अ—पटलीके चलाने और रोकनेका खूटी ।

क—नाली लगानेकी कमानी ।

च— नाडीके कम् आधिक दबाव करनेका गोलाकार चक्रविशेष ।

ट—कज्जलसें रंजित कागज धरनेकी जगह ।

त—चिन्हित होनेके पश्चात् जो कागज निकलना है ।

प—जिनसें कागजपर चिन्ह होने है वो सूई ।

इस यंत्रके लगानेके यह विधि है कि जब हांनीदांतवाले स्थानको रेविथलपर धरकर यंत्रको काममें लाते हैं तो नाडीकी तरफ कमानीको लगनीहै जिसके द्वारा सूईमें कागजपर लहरदार रेखा प्रगट होतीहै। कि जिसमें हृदयके

अथ डाक्टरीमतानुसार नाडीचक्रम्

सं.	इंग्रेजी नाम	इंग्रेजीअक्षरमें नाडीके नाम	संस्कृतनाम	नाडीयोंकी व्यवस्था
१	फ्रिकेंट	Friquent	शीघ्रचारि	हृदयके खटकाके संख्यानुसार नाडी दोप्रकारकीहै पहली फ्रीकेन्ट इसमे आरोग्य अवस्थाकी अपेक्षा गति संख्या अधिकहोतीहै ।
२	इन्फ्रिकेंट	Infriquent	मंदगामिनी	दूसरी इन्फ्रीकेंट इसकी दशा फ्रीकेंटसें विपरीत होतीहै यह स्त्रियोंके वातगुल्म रोगमें होतीहै ।
३	रेग्यूलर्स	Regulars	सावधानता सूचक	हृदयकी गतिके प्रबंधानुसार भी नाडीकी दोअवस्था पाई जातीहै एकरेग्यूलर, नाडीनूमे क्रमानुसार रुधिर जानेवाली नाडीको रेग्यूलर कहतेहै इसपरहाथ रखनेसें गति एकसी मालूमहो और कमीवीचमे अंतर नहीं पडता।
४	इरेग्यूलर्स	Irregulars	असावधानता सूचक	दूसरी इरेग्यूलर अर्थात् नाडीनूमे क्रमके विपरीत रुधिर जांय इस परहाथ रखनेसें गति एकसी प्रतीत नहीं होती और वीचमें अंतर पड जाताहै रोगावस्थामें नाडीका सप्रबंधित अर्थात् क्रमपूर्वक चलना अच्छाहै।
५	इंटरमिटेंट	Intermittent	सांतरिक	जिस नाडीके तडफ होनेमें जितना काल जाताहै उससे अधिक होजाय अर्थात् दूसरी गतिकाभी काल-व्यतीत होजावे उसको इंटरमिटेंट कहतेहै परंतु गतिके भेदसे यह दोप्रकारकीहै एक रेग्युलर इन्टरमिटेंट और दूसरी इररेग्यूलर इन्टरमीटेंट है।
६	फुल या लार्ज	Full या Large	परिपूर्ण	मस्तकके सूजनेमें अन्यकारणोंसे नाडीमे अधिक रुधिर पहुचे और उंगलियोंके नीचे नाडीका उल्लवन अधिक प्रतीतहो तो उसनाडीको फुल या लार्ज कहतेहै यह अधिक रुधिर वृद्धिमें अथवा कठोररोगोमें प्रतीत होतीहै।
७	स्माल	Esmal	रिक्त	जो नाडी फुल लार्जके विपरीतहो अर्थात् नाडियोंमें अल्प रुधिर पहुचे और नाडीका उल्लवन उंगलियोंको थोडा प्रतीतहो उसनाडीको स्माल अर्थात् बारीक नाडी कहतेहै ।
८	थ्रेडीपल्स	Threadypulse	सूक्ष्मतर	जब नाडी अत्यंत सूक्ष्मसूतके समानहो तो उसको इंग्रेजीमें थ्रेडीपल्स कहतेहै यह रुधिरकी न्यूनावस्था अथवा दुर्बलतामें देखी जातीहै ।
९	हार्ड	Hard	कठिन	नाडीकी दिवारकी लचकके तुल्यनाडीकी दोगति होतीहै एक हार्ड अर्थात् कठोर इसे किंचिन्मात्र भी दवानेसे उंगलियोंको कठोरता प्रतीत होतीहै यह नाडीकी अधिक लचकके कारण होतीहै ।
१०	साफ्ट	Soft	मृदु	द्वितीय साफ्ट या नम्र जिसकी दशा हार्ड नाडीके विपरीत होतीहै यह नाडीके अनुरोध (नाडीकीदिवार) की लचकसें और देहके निर्बलतामें पाई जातीहै ।
११	क्वीक्	quick	शीघ्रगामिनी	नाडीकी गतिमें जो समय व्यतीत होताहै उसके अनुसार नाडी द्विविध होतीहै एक क्वीक् अर्थात् शीघ्रगामी नाडीकी प्रत्येक गति शीघ्रहो परंतु एक अथवा मानसिक रोगोमें जिनमें स्वभाव दुष्टहो उनमें पाईजातीहै ।
१२	स्लो	Slow	धीरगामिनी	नाडीके विपरीतहो अर्थात् सुस्तहोउसको स्लो नाडी कहतेहै ।

घडनेका हाल और रुधिर भ्रमणका वृत्तान्त उत्तम रीतिसैं प्रतीत होता है । प्रत्येक लहरमें - एक रेखा उठनेकी होतीहै फिर मुडनेकी और फिर उतरनेकी तथा उतरनेकी लहरमें दो लहर प्रगट होतीहै इन लहरोकाभी चिन्ह स्फि ग्मोग्राफ यंत्रमें लिखाहै ।

खरीरेखा हृदयके संकोच होनेसें होती है और मुरडनेका कोना नाडियोंके किसीप्रकार संकोचसैं होताहै और जिससमय हृदयके संकोचसैं रुधिर अ-यार्टामें पहुचताहै तो पहली रेखा प्रगट होतीहै फिर अयार्टाके किवाड बंद-होनेसैं दूसरी लहर खांचेतक बनतीहै अयार्टाके सुकडनेके पीछे रुधिर आ-गेको बढजाताहै और दूसरी लहर परिपूर्ण होकर एकवार हृदयके खट-केकी चिन्हितरेखा संपूर्ण होजातीहै ।

इति नाडीदर्पणे ऍंग्लैंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकः ।

इति श्रीमाथुरकृष्णलालपुत्रदत्तरामेण सङ्कलिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्नि-घण्टुरत्नाकरान्तर्गते नाडीदर्पणे ऍंग्लैंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकश्चाष्टत्रिंशत्तरङ्गः ॥ ३८ ॥

समाप्तोऽयं नाडीदर्पणाख्यो ग्रंथः ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना.
खेमराज श्रीकृष्णदास.
" श्रीवेंकटेश्वर " छापखाना (मुंबई)